अध्याय ११

श्री चैतन्य महाप्रभु की बेड़ा-कीर्तन लीलाएँ

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने ग्यारहवें अध्याय का सारांश अपने *अमृत-प्रवाह* भाष्य में इस प्रकार दिया है। जब सार्वभौम भट्टाचार्य ने श्री चैतन्य महाप्रभु एवं राजा प्रतापरुद्र को मिलाने का भरसक प्रयत्न किया, तो महाप्रभु ने उनकी प्रार्थना ठुकरा दी। इसी समय श्री रामानन्द राय अपनी सरकारी नौकरी छोड़कर वहीं आ गये और उन्होंने भगवान् चैतन्य के सामने राजा प्रतापरुद्र की अत्यधिक प्रशंसा की। इससे महाप्रभु कुछ नरम हुए। राजा ने भी सार्वभौम भट्टाचार्य के सामने प्रतिज्ञा की और भट्टाचार्य ने संकेत किया कि राजा महाप्रभु से किस प्रकार मिल सकते हैं। अनवसर के समय, जब भगवान् जगन्नाथ पंद्रह दिनों तक विश्राम कर रहे थे, महाप्रभु उनका दर्शन नहीं कर सके, अतः वे आलालनाथ चले गये। बाद में जब बंगाल के भक्तगण उन्हें देखने आये तो वे जगन्नाथ पुरी लौट आये। जब अद्वैत आचार्य तथा अन्य भक्त जगन्नाथ पुरी आ रहे थे, तब श्री चैतन्य महाप्रभु के दो निजी सहायक स्वरूप दामोदर तथा गोविन्द मालाएँ लेकर सभी भक्तों का स्वागत करने गये। राजा प्रतापरुद्र ने अपने महल की छत से सारे भक्तों को आते हुए देखा। गोपीनाथ आचार्य राजा के साथ छत पर खड़े थे और सार्वभौम भट्टाचार्य के आदेशों का पालन करते हुए, उन्होंने प्रत्येक भक्त की पहचान करवाइ। राजा ने गोपीनाथ आचार्य से भक्तों के विषय में बातें की और इसका उल्लेख किया कि ये भक्त तीर्थयात्रा के नियमों का पालन न करके प्रसाद ग्रहण कर रहे हैं। प्रसाद ग्रहण करने के पूर्व न तो उन्होंने अपने बाल कटवाएँ हैं, न ही उन्होंने तीर्थस्थान में उपवास किया है। जब सार्वभौम भट्टाचार्य ने राजा को बताया कि भक्तों ने तीर्थयात्रा के शास्त्र-

कथित आदेशों का उल्लंघन क्यों किया है, तो राजा ने सारे भक्तों को रहने के लिए कमरे दिला दिये और उनके प्रसाद की व्यवस्था कर दी। श्री चैतन्य महाप्रभु ने वासुदेव दत्त तथा अन्य भक्तों से घुल-मिलकर बातें की। तभी हरिदास ठाकुर भी आ गये और श्री चैतन्य महाप्रभु ने उनके दीन तथा विनीत भाव के कारण उन्हें मन्दिर के निकट एक सुन्दर एकान्त स्थान दे दिया। इसके बाद महाप्रभु सारे भक्तों को चार टोलियों में बाँटकर संकीर्तन करने लगे। संकीर्तन के बाद सारे भक्त अपने अपने डेरों में चले गये।

अत्युद्दण्डं ताण्डवं गौरचन्द्रः
कुर्वन्भक्तैः श्री-जगन्नाथ-गेहे ।
नाना-भावालङ्कृताङ्गः स्व-धाम्ना
चक्रे विश्वं प्रेम-वन्या-निमग्नम् ॥ १ ॥

अत्युद्दण्डं ताण्डवं गौरचन्द्रः
कुर्वन्भक्तैः श्री-जगन्नाथ-गेहे ।
नाना-भावालङ्कृताङ्गः स्व-धाम्ना
चक्रे विश्वं प्रेम-वन्या-निमग्नम् ॥ १ ॥

अति—अत्यन्त; **उद्दण्डम्**—ऊँचे कूदकर; **ताण्डवम्**—अत्यन्त सुन्दर नृत्य करके; **गौर-चन्द्रः**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कुर्वन्**—करके; **भक्तैः**—भक्तों के साथ; **श्री-जगन्नाथ-गेहे**—भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर में; **नाना-भाव-अलङ्कृत-अङ्गः**—अपने दिव्य शरीर में अनेक आनन्दमय लक्षणों के साथ; **स्व-धाम्ना**—अपने आनन्दमय प्रेम के प्रभाव से; **चक्रे**—किया; **विश्वम्**—सारे विश्व को; **प्रेम-वन्या-निमग्नम्**—भावपूर्ण प्रेम की बाढ़ में डुबोया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथ मन्दिर के भीतर अपना सुन्दर नृत्य करके सारे जगत् को प्रेम के सागर में निमग्न कर दिया। उन्होंने बहुत ही अच्छी तरह से ऊँचे उछलकर नृत्य किया।

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २ ॥

जय जय—जय जय; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत प्रभु की; **जय**—जय; **गौर-भक्त-वृन्द**—भगवान् चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! श्री अद्वैत प्रभु की जय हो! श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

आर दिन सार्वभौम कहे प्रभु-स्थाने ।
अभय-दान देह' यदि, करि निवेदने ॥ ३ ॥

आर दिन सार्वभौम कहे प्रभु-स्थाने ।
अभय-दान देह' यदि, करि निवेदने ॥ ३ ॥

आर दिन—अगले दिन; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **कहे**—कहा; **प्रभु-स्थाने**—चैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति में; **अभय-दान**—अभय दान; **देह'**—दीजिए; **यदि**—यदि; **करि**—मैं करूँ; **निवेदने**—निवेदन।

अनुवाद

अगले दिन सार्वभौम भट्टाचार्य ने चैतन्य महाप्रभु से निवेदन किया कि वे उन्हें अनुमति दें, जिससे वे अभय होकर अपनी बात कह सकें।

प्रभु कहे,—कह तुमि, नाहि किछु भय ।
योग्य हैले करिब, अयोग्य हैले नय ॥ ४ ॥

प्रभु कहे,—कह तुमि, नाहि किछु भय ।
योग्य हैले करिब, अयोग्य हैले नय ॥ ४ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **कह तुमि**—हाँ, आप बोल सकते हो; **नाहि**—नहीं है; **किछु**—कुछ भी; **भय**—भय; **योग्य**—उचित; **हैले**—यदि हैं, तो; **करिब**—मैं स्वीकार करूँगा; **अयोग्य**—अनुचित; **हैले**—यदि हो; **नय**—तब मैं स्वीकार नहीं करूँगा।

अनुवाद

महाप्रभु ने भट्टाचार्य को आश्वासन दिया कि वे बिना किसी भय के अपनी बात कहें, किन्तु साथ में यह भी कहा कि यदि उनकी बात उपयुक्त होगी, तभी वे स्वीकार करेंगे, अन्यथा अस्वीकार कर देंगे।

সার্বভৌম কহে—এই প্রতাপরুদ্র রায় ।
উৎকণ্ঠা হঞাছে, তোমা মিলিবারে চায় ॥৫॥

सार्वभौम कहे—एइ प्रतापरुद्र राय ।
उत्कण्ठा हञाछे, तोमा मिलिबारे चाय ॥५॥

सार्वभौम कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **एइ**—यह; **प्रतापरुद्र राय**—जगन्नाथ पुरी के राजा प्रतापरुद्र; **उत्कण्ठा हञाछे**—उत्सुक है; **तोमा**—आपसे; **मिलिबारे**—मिलने के लिए; **चाय**—वह चाहता है।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "प्रतापरुद्र राय नाम का एक राजा है। वह आपसे मिलने के लिए अत्यन्त उत्सुक है और आपकी अनुमति चाहता है।"

কর্ণে হস্ত দিয়া প্রভু স্মরে 'নারায়ণ' ।
সার্বভৌম, কহ কেন অয়োগ্য বচন ॥৬॥

कर्णे हस्त दिया प्रभु स्मरे 'नारायण' ।
सार्वभौम, कह केन अयोग्य वचन ॥६॥

कर्णे—कानों पर; **हस्त**—हाथ; **दिया**—रखकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **स्मरे**—स्मरण करते हैं; **नारायण**—भगवान् नारायण का पावन नाम; **सार्वभौम**—मेरे प्रिय सार्वभौम; **कह**—आप कहते हो; **केन**—क्यों; **अयोग्य वचन**—अनुचित वचन।

अनुवाद

इस प्रस्ताव को सुनते ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने हाथों से कान बन्द कर दिये और कहा, "अरे सार्वभौम, आप मुझसे ऐसी अनुपयुक्त बात के लिए अनुरोध क्यों कर रहे हैं?

বিরক্ত সন্ন্যাসী আমার রাজ-দরশন ।
স্ত্রী-দরশন-সম বিষের ভক্ষণ ॥৭॥

विरक्त सन्न्यासी आमार राज-दरशन ।
स्त्री-दरशन-सम विषेर भक्षण ॥७॥

विरक्त—वैरागी ; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **आमार**—मेरा; **राज-दरशन**—राजा को मिलना; **स्त्री-दरशन**—स्त्री को देखने; **सम**—के समान; **विषेर**—विष को; **भक्षण**—पीना।

अनुवाद

"मैं संन्यासी हूँ, इसलिए मेरे लिए किसी राजा से मिलना उसी तरह घातक है, जिस तरह किसी स्त्री से मिलना। इन दोनों से मिलना विषपान करने के तुल्य है।"

निष्किञ्चनस्य भगवद्भजनोन्मुखस्य
पारं परं जिगमिषोर्भव-सागरस्य ।
सन्दर्शनं विषयिणामथ योषितां च
हा हन्त हन्त विष-भक्षणतोऽप्यसाधु ॥८॥

निष्किञ्चनस्य भगवद्भजनोन्मुखस्य
पारं परं जिगमिषोर्भव-सागरस्य ।
सन्दर्शनं विषयिणामथ योषितां च
हा हन्त हन्त विष-भक्षणतोऽप्यसाधु ॥८॥

निष्किञ्चनस्य—भौतिक भोग से पूर्णतया विरक्त व्यक्ति; **भगवत्**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की; **भजन**—सेवा करने में; **उन्मुखस्य**—लगने में उत्सुक; **पारम्**—दूसरी ओर; **परम्**—दूर; **जिगमिषोः**—जाने का इच्छुक; **भव-सागरस्य**—भौतिक अस्तित्व के सागर का; **सन्दर्शनम्**—देखने (किसी भौतिक हेतु से); **विषयिणाम्**—भौतिक कार्यों में लगे लोगों का; **अथ**—तथा; **योषिताम्**—स्त्रियों का; **च**—भी; **हा**—खेद है; **हन्त हन्त**—अत्यन्त शोक की अभिव्यक्ति; **विष-भक्षणतः**—विषपान की अपेक्षा; **अपि**—भी; **असाधु**—अधिक दोषयुक्त है।

अनुवाद

अत्यधिक शोक प्रकट करते हुए महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य को बतलाया "हाय! जो व्यक्ति भवसागर को पार करना चाहता है और बिना किसी भौतिक हेतु के भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा में लगना चाहता है, उसके लिए इन्द्रियतृप्ति में लगे भौतिकतावादी अथवा ऐसी ही रुचि रखने वाली स्त्री को देखना जान-बूझकर विष खाने से भी अधिक निन्दनीय है।"

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्री चैतन्य-चन्द्रोदय-नाटक* (८.२३) का है। इस प्रकार श्री चैतन्य महाप्रभु एक संन्यासी के लिए सिद्धान्तों की स्थापना करते हैं, जो आध्यात्मिक प्रगति करने के लिए भौतिक संसार का त्याग करता है। आध्यात्मिक प्रगति जादूगरी के लिए नहीं, अपितु भौतिक जगत् पार करके वैकुण्ठ जाने के लिए होती है। *पारं परं जिगमिषोः* का अर्थ है भौतिक जगत् से उस पार जाने की इच्छा करना। कहते हैं कि वैतरणी नाम की एक नदी होती है, जिसके इस पार भौतिक जगत् है और उस पार आध्यात्मिक जगत् है। चूँकि वैतरणी नदी की तुलना विशाल सागर से की जाती है, इसलिए इसे *भवसागर* कहा जाता है, अर्थात् जन्म तथा मृत्यु की पुनरावृत्ति का सागर। आध्यात्मिक जीवन का लक्ष्य जन्म-मृत्यु की इस पुनरावृत्ति को रोकना और वैकुण्ठ में प्रवेश करना है, जहाँ मनुष्य शाश्वत रूप से आनन्दपूर्वक रह सके।

दुर्भाग्यवश सामान्य जनों को आध्यात्मिक जीवन या वैकुण्ठ लोक की कोई भी जानकारी नहीं है। *भगवद्गीता* (८.२०) में वैकुण्ठ लोक का वर्णन मिलता है

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात् सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥

"एक दूसरी भी अव्यक्त प्रकृति है, जो शाश्वत है और इस व्यक्त तथा अव्यक्त पदार्थ से परे है। यह परम पूर्ण है और कभी विनष्ट नहीं होती। जब यह संसार विनष्ट हो जाता है, तब यह जैसी की तैसी बनी रहती है।"

इस तरह इस भौतिक जगत् के परे आध्यात्मिक प्रकृति है, जो शाश्वत है। आध्यात्मिक प्रगति का अर्थ है, भौतिक कार्यों को बन्द करना और आध्यात्मिक कार्यों का शुभारम्भ करना। यह विधि *भक्तियोग* है। भौतिक जगत् में इन्द्रियतृप्ति का साधन मुख्यतः स्त्री है। अतः जो आध्यात्मिक जीवन में गम्भीरता से रुचि रखता हो, उसे स्त्री से पूर्णरूपेण बचना चाहिए। संन्यासी को भौतिक लाभ के लिए किसी भी पुरुष या स्त्री से नहीं मिलना चाहिए। साथ ही, भौतिकतावादी पुरुषों तथा स्त्रियों से बातें करना भी घातक होता है और इनकी तुलना विष पीने से की गई है। श्री चैतन्य महाप्रभु इस बात पर अत्यन्त कठोर थे। इसीलिए

उन्होंने राजा प्रतापरुद्र से भेंट करने से मना कर दिया, क्योंकि वह राजनीतिक तथा आर्थिक मामलों में सदैव व्यस्त रहता था। महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य जैसे अपने मित्र तथा भक्त के अनुरोध को भी ठुकराकर राजा से मिलना अस्वीकार कर दिया।

सार्वभौम कहे,—सत्य तोमार वचन ।
जगन्नाथ-सेवक राजा किन्तु भक्तोत्तम ॥९॥

सार्वभौम कहे,—सत्य तोमार वचन ।
जगन्नाथ-सेवक राजा किन्तु भक्तोत्तम ॥ ९ ॥

सार्वभौम कहे—सावभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया; **सत्य**—सत्य; **तोमार**—आपका; **वचन**—कथन; **जगन्नाथ-सेवक**—भगवान् जगन्नाथ का सेवक; **राजा**—राजा; **किन्तु**—किन्तु; **भक्त-उत्तम**—महान् भक्त।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, आपने जो कुछ कहा है, वह सही है; किन्तु यह राजा कोई सामान्य राजा नहीं है। यह जगन्नाथजी का महान् भक्त तथा सेवक है।"

प्रभु कहे,—तथापि राजा काल-सर्पाकार ।
काष्ठ-नारी-स्पर्शे यैछे उपजे विकार ॥१०॥

प्रभु कहे,—तथापि राजा काल-सर्पाकार ।
काष्ठ-नारी-स्पर्शे ग्रैछे उपजे विकार ॥ १० ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तथापि**—फिर भी; **राजा**—राजा; **काल-सर्प-आकार**—विषैले सर्प की भाँति; **काष्ठ-नारी**—काठ की बनी स्त्री; **स्पर्शे**—के स्पर्श से; **ग्रैछे**—जैसे; **उपजे**—उत्पन्न होती है; **विकार**—उत्तेजना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "यह सच है कि राजा महान् भक्त है, फिर भी उसे विषैला साँप ही समझना होगा। इसी प्रकार स्त्री चाहे काठ की ही (पुतली) क्यों न हो, उसके रूप को स्पर्श करने मात्र से मनुष्य विचलित हो उठता है।

तात्पर्य

श्री चाणक्य पण्डित ने अपनी नैतिक शिक्षाओं में कहा है—*त्यज दुर्जनसंसर्गं भज साधुसमागमम्।* इसका अर्थ यह है कि मनुष्य को भौतिकतावादी लोगों की संगति त्याग देनी चाहिए और आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत लोगों की संगति करनी चाहिए। भौतिकतावादी व्यक्ति कितना ही योग्य क्यों न हो, वह विषैले सर्प से अधिक अच्छा नहीं है। हर व्यक्ति जानता है कि साँप भयानक तथा विषैला होता है और जब इसका फन मणियों से अलंकृत होता है, तब भी यह कम विषैला या कम घातक नहीं होता। इसलिए भौतिकतावादी व्यक्ति कितना ही योग्य क्यों न हो, वह मणियों से अलंकृत सर्प से अधिक अच्छा नहीं है। अतएव ऐसे भौतिकतावादी व्यक्तियों के साथ व्यवहार करते समय सावधान रहना चाहिए, जिस प्रकार कि मणियुक्त सर्प से सावधान रहा जाता है।

स्त्री चाहे काठ की हो या पत्थर की, सजाने पर वह आकर्षक बन जाती है। उसके स्पर्श मात्र से मनुष्य कामुक हो जाता है। अतएव मनुष्य को अपने मन पर विश्वास नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह इतना चंचल होता है कि वह किसी भी क्षण अपने शत्रुओं के वशीभूत हो सकता है। मन के साथ सर्वदा छह शत्रु लगे रहते हैं—काम, क्रोध, मद, मोह, मात्सर्य तथा भय। आध्यात्मिक चेतना में रत मन से भी उसी तरह सावधान रहने की आवश्यकता है, जिस तरह साँप से सावधान रहना चाहिए। मनुष्य को यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि उसका मन प्रशिक्षित हो गया है, अतएव वह जो चाहे सो कर सकता है। आध्यात्मिक जीवन में रुचि रखने वाले व्यक्ति को अपने मन को सदैव भगवान् की सेवा में लगाये रखना चाहिए, जिससे मन के साथ लगे हुए उसके शत्रु दमित हो जायें। यदि मन हर क्षण कृष्णभावनामृत में नहीं लगा रहेगा, तो वह शत्रुओं के वश में हो सकता है। इस तरह हम मन के शिकार बन सकते हैं।

हरे कृष्ण मन्त्र का जप करने से मन कृष्ण के चरणकमलों में निरन्तर लगा रहता है, जिससे मन के शत्रुओं को आक्रमण करने का अवसर नहीं मिल पाता। इन श्लोकों के अनुसार श्री चैतन्य महाप्रभु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए हमें मन के प्रति सदैव सतर्क रहना चाहिए और उसे किसी भी परिस्थिति में

इधर-उधर नहीं लगाना चाहिए। एक बार उत्तेजित होने पर मन इस जीवन में विध्वंस कर सकता है, चाहे कोई कितना ही आध्यात्मिक रूप से उन्नत क्यों न हो। मन विशेषतया भौतिकतावादी पुरुषों तथा स्त्रियों की संगति से उत्तेजित होता है। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु अपने निजी आचरण के द्वारा हर एक को सचेत करते हैं कि भौतिकतावादी पुरुष या स्त्री से भेंट करने से बचा जाए।

आकारादपि भेतव्यं स्त्रीणां विषयिणामपि ।
यथाहेर्मनसः क्षोभस्तथा तस्याकृतेरपि ॥ ११॥

आकारादपि भेतव्यं स्त्रीणां विषयिणामपि ।
यथाहेर्मनसः क्षोभस्तथा तस्याकृतेरपि ॥ ११ ॥

आकारात्—शारीरिक आकार से; **अपि**—भी; **भेतव्यम्**—डरना चाहिए; **स्त्रीणाम्**—स्त्रियों के; **विषयिणाम्**—विषयी लोगों के; **अपि**—भी; **यथा**—जैसे; **अहेः**—सर्प से; **मनसः**—मन की; **क्षोभः**—उत्तेजना; **तथा**—वैसे; **तस्य**—इसका; **आकृतेः**—आकृति से; **अपि**—भी।

अनुवाद

"'जिस तरह मनुष्य किसी जीवित सर्प या सर्प की आकृति को देखते ही डर जाता है, उसी तरह आत्म-साक्षात्कार के इच्छुक व्यक्ति को भौतिकतावादी पुरुष तथा स्त्री से डरना चाहिए। उसे उनके शारीरिक लक्षणों पर दृष्टि भी नहीं डालनी चाहिए।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्री चैतन्य-चन्द्रोदय नाटक* (८.२४) से लिया गया है।

ऐछे बात पुनरपि मुखे ना आनिबे ।
कह यदि, तबे आमाय एथा ना देखिबे ॥ १२॥

ऐछे बात पुनरपि मुखे ना आनिबे ।
कह यदि, तबे आमाय एथा ना देखिबे ॥ १२ ॥

ऐछे बात—ऐसी बात; **पुनरपि**—फिर कभी; **मुखे**—मुख में; **ना**—न; **आनिबे**—लाओ; **कह यदि**—यदि आप कहते हो; **तबे**—तब; **आमाय**—मुझे; **एथा**—यहाँ; **ना**—न; **देखिबे**—देखोगे।

अनुवाद

"हे भट्टाचार्य, यदि आप इसी तरह मुझसे कहते रहोगे, तो आप मुझे पुनः यहाँ कभी नहीं देखेंगे। अतः आप कभी भी ऐसा निवेदन अपने मुख से न करना।"

ভয় পাঞা সার্বভৌম নিজ ঘরে গেলা ।
বাসায় গিয়া ভট্টাচার্য চিন্তিত হইলা ॥১৩॥

भय पाञा सार्वभौम निज घरे गेला ।
वासाय गिया भट्टाचार्य्य चिन्तित हइला ॥१३॥

भय पाञा—डरकर; **सार्वभौम**—सार्वभौम; **निज**—अपने; **घरे**—घर को; **गेला**—लौट आये; **वासाय गिया**—अपने घर पहुँचकर; **भट्टाचार्य्य**—भट्टाचार्य; **चिन्तित हइला**—चिन्तन करने लगे।

अनुवाद

सार्वभौम डरकर अपने घर वापस चले गये और इस विषय पर मनन करने लगे।

হেন কালে প্রতাপরুদ্র পুরুষোত্তমে আইলা ।
পাত্র-মিত্র-সঙ্গে রাজা দরশনে চলিলা ॥১৪॥

हेन काले प्रतापरुद्र पुरुषोत्तमे आइला ।
पात्र-मित्र-सङ्गे राजा दरशने चलिला ॥१४॥

हेन काले—इस समय; **प्रतापरुद्र**—राजा प्रतापरुद्र; **पुरुषोत्तमे**—जगन्नाथ पुरी में; **आइला**—पहुँचे; **पात्र-मित्र-सङ्गे**—अपने सचिवों, मंत्रियों, सैनिक अधिकारीयों इत्यादि के साथ; **राजा**—राजा; **दरशने**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शनार्थ; **चलिला**—चले गये।

अनुवाद

उसी समय महाराज प्रतापरुद्र जगन्नाथ पुरी अर्थात् पुरुषोत्तम पधारे और वे अपने मन्त्रियों, सचिवों तथा सैनिक अधिकारियों समेत जगन्नाथ मन्दिर का दर्शन करने गये।

तात्पर्य

ऐसा प्रतीत होता है कि महाराज प्रतापरुद्र अपनी राजधानी कटक में रहते

थे। बाद में उन्होंने अपनी राजधानी जगन्नाथ पुरी से कुछ मील दूर खुर्दा में स्थानान्तरित कर ली। आजकल वहाँ खुर्दा रोड नामक एक रेलवे स्टेशन है।

रामानन्द राय आइला गजपति-सङ्गे ।
प्रथमेई प्रभुरे आसि' मिलिला बहु-रङ्गे ॥ १५ ॥

रामानन्द राय आइला गजपति-सङ्गे ।
प्रथमेइ प्रभुरे आसि' मिलिला बहु-रङ्गे ॥ १५ ॥

रामानन्द राय—रामानन्द राय; **आइला**—आये; **गजपति-सङ्गे**—राजा के साथ; **प्रथमेइ**—पहले पहल; **प्रभुरे**—चैतन्य महाप्रभु को; **आसि'**—आकर; **मिलिला**—मिले; **बहु-रङ्गे**—अति प्रसन्न होकर।

अनुवाद

जब राजा प्रतापरुद्र जगन्नाथ पुरी लौटे, तब रामानन्द राय भी उनके साथ आये। वे तुरन्त हर्षपूर्वक श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलने गये।

राय प्रणति कैल, प्रभु कैल आलिङ्गन ।
दुई जने प्रेमावेशे करेन क्रन्दन ॥ १६ ॥

राय प्रणति कैल, प्रभु कैल आलिङ्गन ।
दुइ जने प्रेमावेशे करेन क्रन्दन ॥ १६ ॥

राय प्रणति कैल—रामानन्द राय ने नमस्कार किया; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **कैल**—किया; **आलिङ्गन**—आलिंगन; **दुइ जने**—वे दोनों; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **करेन**—किया; **क्रन्दन**—रोदन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलकर रामानन्द राय ने उन्हें नमस्कार किया। महाप्रभु ने उनका आलिंगन किया और दोनों प्रेमावेश में आकर रोने लगे।

राय-सङ्गे प्रभुर देखि' स्नेह-व्यवहार ।
सर्व भक्त-गणेर मने हैल चमत्कार ॥ १७ ॥

राय-सङ्गे प्रभुर देखि' स्नेह-व्यवहार ।
सर्व भक्त-गणेर मने हैल चमत्कार ॥ १७ ॥

राय-सङ्गे—रामानन्द राय के साथ; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु का; **देखि'**—देखकर; **स्नेह-व्यवहार**—अत्यन्त घनिष्ठ स्नेह पूर्ण व्यवहार; **सर्व**—सभी; **भक्त-गणेर**—सभी भक्तों के; **मने**—मन में; **हैल**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्यचकित।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय के साथ श्री चैतन्य महाप्रभु के घनिष्ठ व्यवहार को देखकर सारे भक्त अचम्भित हो गये।

রায় কহে,—তোমার আজ্ঞা রাজাকে কহিল ।
তোমার ইচ্ছায় রাজা মোর বিষয় ছাড়াইল ॥১৮॥

राय कहे,—तोमार आज्ञा राजाके कहिल ।
तोमार इच्छाय राजा मोर विषय छाड़ाइल ॥ १८ ॥

राय कहे—रामानन्द राय ने कहा; **तोमार आज्ञा**—आपकी आज्ञा; **राजाके कहिल**—मैंने राजा को सूचित किया; **तोमार इच्छाय**—आपकी कृपा से; **राजा**—राजा ने; **मोर**—मेरी; **विषय**—भौतिक गतिविधियों से; **छाड़ाइल**—छूट दिलाई।

अनुवाद

रामानन्द राय ने कहा, "मैंने राजा प्रतापरुद्र को आपके आदेश से अवगत करा दिया है कि वे मुझे नौकरी से मुक्त कर दें। आपकी कृपा से राजा ने प्रसन्न होकर मुझे इन भौतिक कार्यों से मुक्त कर दिया है।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय से अनुरोध किया था कि वे गवर्नर पद से अवकाश प्राप्त कर लें। फलत: महाप्रभु की इच्छानुसार रामानन्द राय ने राजा के पास आवेदन भेज दिया था। राजा ने प्रसन्न होकर उन्हें कार्यमुक्त कर दिया था। अत: रामानन्द राय अपनी नौकरी से मुक्त होकर सरकारी पेंशन पाने लगे।

আমি কহি,—আমা হৈতে না হয় 'বিষয়' ।
চৈতন্য-চরণে রহোঁ, যদি আজ্ঞা হয় ॥১৯॥

आमि कहि,—आमा हैते ना हय 'विषय' ।
चैतन्य-चरणे रहों, यदि आज्ञा हय ॥ १९ ॥

आमि कहि—मैंने कहा; **आमा हैते**—मेरे द्वारा; **ना**—नहीं; **हय**—सम्भव; **विषय**—सरकारी सेवा; **चैतन्य-चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में; **रहों**—मैं रहूँ; **यदि आज्ञा हय**—यदि आप की आज्ञा हो तो।

अनुवाद

"मैंने उनसे कहा, 'हे राजन्, अब मैं राजनैतिक कार्यों में नहीं लगा रहना चाहता। मेरी इच्छा केवल श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में रहने की है। कृपया मुझे अनुमति दें।'

तोमार नाम शुनि' राजा आनन्दित हैल ।
आसन हैते उठि' मोरे आलिङ्गन कैल ॥२०॥

तोमार नाम शुनि' राजा आनन्दित हैल ।
आसन हैते उठि' मोरे आलिङ्गन कैल ॥ २० ॥

तोमार—आपका; **नाम**—नाम; **शुनि'**—सुनकर; **राजा**—राजा; **आनन्दित**—आनन्दित; **हैल**—हो गया; **आसन हैते**—अपने सिंहासन से; **उठि'**—खड़े होकर; **मोरे**—मुझे; **आलिङ्गन कैल**—गले लगाया।

अनुवाद

"जब मैंने यह प्रस्ताव रखा, तो आपका नाम सुनते ही राजा अत्यधिक प्रसन्न हो गये। वे तुरन्त अपने सिंहासन से उठे और उन्होंने मेरा आलिंगन कर लिया।

तोमार नाम शुनि' हैल महा-प्रेमावेश ।
मोर हाते धरि' करे पिरीति विशेष ॥२१॥

तोमार नाम शुनि' हैल महा-प्रेमावेश ।
मोर हाते धरि' करे पिरीति विशेष ॥ २१ ॥

तोमार—आपका; **नाम**—नाम; **शुनि'**—सुनकर; **हैल**—हो गये; **महा**—महान्; **प्रेम-आवेश**—प्रेमावेश; **मोर हाते**—मेरा हाथ; **धरि'**—पकड़कर; **करे**—किया; **पिरीति**—स्नेह के लक्षण; **विशेष**—विशेष।

अनुवाद

"हे प्रभु, ज्योंही राजा ने आपका पवित्र नाम सुना, वे अत्यधिक

भावविह्वल हो उठे। मेरा हाथ पकड़कर उन्होंने प्रेम के सारे लक्षणों को प्रदर्शित किये।

তোমার যে বর্তন, তুমি খাও সেই বর্তন ।
নিশ্চিন্ত হঞা ভজ চৈতন্যের চরণ ॥২২॥

তোমার যে বর্তন, তুমি খাও সেই বর্তন ।
নিশ্চিন্ত হঞা ভজ চৈতন্যের চরণ ॥ ২২॥

তোমার—आपका; **যে**—जो कुछ; **বর্তন**—वेतन; **তুমি**—तुम; **খাও**—लेते हो; **সেই**—वह; **বর্তন**—वेतन; **নিশ্চিন্ত হঞা**—बिना चिन्ता के; **ভজ**—मात्र पूजा करो; **চৈতন্যের**—भगवान् चैतन्य महाप्रभु के; **চরণ**—चरणकमलों की।

अनुवाद

"ज्योंही उन्होंने मेरा निवेदन सुना, उन्होंने तुरन्त बिना कटौती के मेरी अवकाशवृत्ति (पेंशन) मंजूर कर दी। इस तरह राजा ने अवकाशवृत्ति के रूप में पूरा वेतन देने की अनुमति दी और मुझसे अनुनय किया कि मैं आपके चरणकमलों की सेवा निश्चिन्त होकर करूँ।

আমি—ছার, যোগ্য নহি তাঁর দরশনে ।
তাঁরে যেই ভজে তাঁর সফল জীবনে ॥২৩॥

আমি—ছার, যোগ্য নহি তাঁর দরশনে ।
তাঁরে যেই ভজে তাঁর সফল জীবনে ॥ ২৩॥

আমি—मैं; **ছার**—बहुत पतित; **যোগ্য**—योग्य; **নহি**—नहीं; **তাঁর**—उनके; **দরশনে**—दर्शन के लिए; **তাঁরে**—उनको; **যেই**—जो कोई; **ভজে**—भजता है; **তাঁর**—उसका; **সফল**—सफल; **জীবনে**—जीवन।

अनुवाद

"तब महाराज प्रतापरुद्र ने विनीत होकर कहा, 'मैं अत्यन्त पतित हूँ और गर्हित हूँ। मैं महाप्रभु का दर्शन पाने के लिए अयोग्य हूँ। जो व्यक्ति उनकी सेवा में लगता है, उसका जीवन सफल हो जाता है।'

পরম কৃপালু তেঁহ ব্রজেন্দ্র-নন্দন ।
কোন-জন্মে মোরে অবশ্য দিবেন দরশন ॥২৪॥

परम कृपालु तेंह व्रजेन्द्र-नन्दन ।
कोन-जन्मे मोरे अवश्य दिबेन दरशन ॥ २४॥

परम—परम; **कृपालु**—कृपालु; **तेंह**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—महाराज नन्द के पुत्र; **कोन-जन्मे**—किसी भविष्य जन्म में; **मोरे**—मुझे; **अवश्य**—अवश्य; **दिबेन**—देंगे; **दरशन**—दर्शन।

अनुवाद

"राजा ने तब कहा, 'श्री चैतन्य महाप्रभु महाराज नन्द के पुत्र कृष्ण हैं। वे अत्यन्त कृपालु हैं और मैं आशा करता हूँ कि वे मुझे अगले जन्म में अवश्य दर्शन देंगे।'

যে তাঁহার প্রেম-আর্তি দেখিলুঁ তোমাতে ।
তার এক প্রেম-লেশ নাহিক আমাতে ॥২৫॥

ग्ने ताँहार प्रेम-आर्ति देखिलुँ तोमाते ।
तार एक प्रेम-लेश नाहिक आमाते ॥ २५॥

ग्ने—जो कुछ; **ताँहार**—उनकी; **प्रेम-आर्ति**—भगवत्प्रेम की दर्दनाक अनुभूति; **देखिलुँ**—मैंने देखी; **तोमाते**—आपके प्रति; **तार**—उसकी; **एक**—एक; **प्रेम-लेश**—प्रेम का भाग; **नाहिक**—नहीं है; **आमाते**—मुझ में।

अनुवाद

"हे प्रभु, मैं सोचता हूँ कि मुझ में महाराज प्रतापरुद्र के प्रेम का एक अंश भी नहीं है।"

প্রভু কহে,—তুমি কৃষ্ণ-ভকত-প্রধান ।
তোমাকে যে প্রীতি করে, সেই ভাগ্যবান্ ॥২৬॥

प्रभु कहे,—तुमि कृष्ण-भकत-प्रधान ।
तोमाके ग्ने प्रीति करे, सेइ भाग्यवान् ॥ २६॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तुमि**—आप; **कृष्ण-भकत-प्रधान**—भगवान्

कृष्ण के भक्तों के प्रमुख; **तोमाके**—आपको; **ग्रे**—जो कोई; **प्रीति करे**—प्रेम करता है; **सेइ**—वह व्यक्ति; **भाग्यवान्**—अत्यन्त भाग्यशाली।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "हे रामानन्द राय, आप कृष्ण के भक्तों में अग्रणी हो, अतएव जो भी आप से प्रेम करता है, वह निश्चित रूप से अत्यन्त भाग्यशाली है।

तोमाते ये एत प्रीति हइल राजार ।
एइ गुणे कृष्ण ताँरे करिबे अङ्गीकार ॥२७॥

तोमाते ग्रे एत प्रीति हइल राजार ।
एइ गुणे कृष्ण ताँरे करिबे अङ्गीकार ॥ २७॥

तोमाते—आप के लिए; **ग्रे**—वह; **एत**—इतना; **प्रीति**—प्रेम; **हइल**—था; **राजार**—राजा का; **एइ गुणे**—इस कारण; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **ताँरे**—उसे; **करिबे अङ्गीकार**—स्वीकार करेंगे।

अनुवाद

"चूँकि राजा ने आप पर इतना प्रेम दर्शाया है, अतएव भगवान् कृष्ण उसे अवश्य स्वीकार करेंगे।

तात्पर्य

राजा प्रतापरुद्र ने भट्टाचार्य के माध्यम से श्री चैतन्य महाप्रभु से भेंट करने के लिए प्रार्थना की थी और भट्टाचार्य ने यह प्रार्थना उनके समक्ष रखी भी। किन्तु महाप्रभु ने तुरन्त ही मिलने से मना कर दिया। अब जब रामानन्द राय ने महाप्रभु को बतलाया कि राजा उनके दर्शन के लिए कितने इच्छुक हैं, तो महाप्रभु तुरन्त प्रसन्न हो गये। श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय से अनुरोध किया कि वे अपने सरकारी पद से अवकाश प्राप्त कर ले और श्री पुरुषोत्तम-क्षेत्र (जगन्नाथ पुरी) आकर उनके साथ रहें। जब यह प्रस्ताव राजा प्रतापरुद्र के समक्ष रखा गया, तो उन्होंने तुरन्त उसे स्वीकार कर लिया और रामानन्द को पूरी पेंशन देकर प्रोत्साहित भी किया। महाप्रभु को यह बात बहुत अच्छी लगी। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि जब कोई भगवान् के दास की सेवा करता है, तब भगवान् अधिक प्रसन्न होते हैं। सामान्य भाषा में कहावत है,

"यदि तुम मुझसे प्रेम करना चाहते हो, तो मेरे कुत्ते को प्रेम करो।" पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के पास जाने के लिए उनके विश्वस्त दास के माध्यम से जाना होता है। यही विधि है। श्री चैतन्य महाप्रभु स्पष्ट कहते हैं, "हे रामानन्द राय, चूँकि राजा तुम्हें चाहता है, अतएव वह अत्यन्त भाग्यशाली है। तुम्हारे प्रति प्रेम के कारण भगवान् कृष्ण उसे अवश्य अंगीकार करेंगे।"

যে মে ভক্ত-জনাঃ পার্থ ন মে ভক্তাশ্চ তে জনাঃ ।
মদ্ভক্তানাং চ যে ভক্তাস্তে মে ভক্ত-তমা মতাঃ ॥২৮॥

য়ে মে ভক্ত-জনাঃ পার্থ ন মে ভক্তাশ্চ তে জনাঃ ।
মদ্ভক্তানাং চ য়ে ভক্তাস্তে মে ভক্ত-তমা মতাঃ ॥ ২৮ ॥

য়ে—वे जो; **मे**—मेरे; **भक्त-जनाः**—भक्त; **पार्थ**—हे अर्जुन; **न**—नहीं; **मे**—मेरे; **भक्ताः**—भक्त; **च**—और; **ते**—उन; **जनाः**—लोग; **मत्-भक्तानाम्**—मेरे भक्तों का; **च**—अवश्य; **य़े**—वे जो; **भक्ताः**—भक्त; **ते**—ऐसे व्यक्ति; **मे**—मेरे; **भक्त-तमाः**—अत्यन्त उत्तम भक्त; **मताः**—यह मेरा मत है।

अनुवाद

"(भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा :) 'जो मेरे प्रत्यक्ष भक्त हैं, वे वास्तव में मेरे भक्त नहीं हैं, किन्तु जो मेरे दास के भक्त हैं, वे सचमुच मेरे भक्त हैं।'

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु यह श्लोक *आदि पुराण* से उद्धृत करते हैं। यह श्लोक *लघुभागवतामृत* (२.६) में भी आया है।

আদরঃ পরিচর্যায়াং সর্বাঙ্গৈরভিবন্দনম্ ।
মদ্ভক্ত-পূজাভ্যধিকা সর্ব-ভূতেষু মন্মতিঃ ॥২৯॥
মদর্থেষ্বঙ্গ-চেষ্টা চ বচসা মদগুণেরণম্ ।
ময়্যর্পণং চ মনসঃ সর্ব-কাম-বিবর্জনম্ ॥৩০॥

আদরঃ পরিচর্য়ায়াং সর্বাঙ্গৈরভিবন্দনম্ ।
মদ্ভক্ত-পূজাভ্যধিকা সর্ব-ভূতেষু মন্মতিঃ ॥ ২৯ ॥

मदर्थेष्वङ्ग-चेष्टा च वचसा मद्गुणेरणम् ।
मय्यर्पणं च मनसः सर्व-काम-विवर्जनम् ॥ ३० ॥

आदरः—सम्मान; **परिचर्य्यायाम्**—सेवा में; **सर्व-अङ्गैः**—शरीर के सभी अंगों से; **अभिवन्दनम्**—अभिवादन करके; **मत्-भक्त**—मेरे भक्तों की; **पूजा**—पूजा करके; **अभ्यधिका**—अति उच्च; **सर्व-भूतेषु**—सभी जीवों में; **मत्-मतिः**—मेरे साथ सम्बन्ध होने की अनुभूति; **मत्-अर्थेषु**—मेरे सेवा के लिए; **अङ्ग-चेष्टाः**—शारीरिक शक्ति लगाकर; **च**—और; **वचसा**—वाणी से; **मत्-गुण-ईरणम्**—मेरी महिमाएँ गाकर; **मयि**—मुझे; **अर्पणम्**—अर्पण; **च**—और; **मनसः**—मन की; **सर्व-काम**—सारी भौतिक कामनाएँ; **विवर्जनम्**—छोड़कर।

अनुवाद

"'मेरे भक्त बड़ी सतर्कता तथा आदर से मेरी सेवा करते हैं। वे अपने सारे अंगों से मुझे नमस्कार करते हैं। वे मेरे अन्य भक्तों की पूजा करते हैं और सारे जीवों को मुझसे सम्बन्धित पाते हैं। वे मेरे लिए अपने शरीर की सारी शक्ति लगा देते हैं। वे मेरे गुणों तथा रूप की महिमा का बखान करने में अपनी वाणी का प्रयोग करते हैं। वे अपना मन भी मुझे अर्पित कर देते हैं और सारी भौतिक इच्छाओं को त्यागने की चेष्टा करते हैं। मेरे भक्तों के यही लक्षण हैं।'

तात्पर्य

ये दोनों श्लोक *श्रीमद्भागवत* (११.१९.२१-२२) के हैं। जब उद्धव भक्ति के विषय में प्रश्न कर रहे थे, तब पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण ने ये श्लोक कहे थे।

আরাধনানাং সর্বেষাং বিষ্ণোরারাধনং পরম্ ।
তস্মাত্পরতরং দেবি তদীয়ানাং সমর্চনম্ ॥ ৩১ ॥

आराधनानां सर्वेषां विष्णोराराधनं परम् ।
तस्मात्परतरं देवि तदीयानां समर्चनम् ॥ ३१ ॥

आराधनानाम्—पूजा; **सर्वेषाम्**—सबकी; **विष्णोह्**—भगवान् विष्णु की; **आराधनम्**—पूजा; **परम्**—परम, सर्वोच्च; **तस्मात्**—और भगवान् विष्णु की पूजा से; **परतरम्**—अधिक श्रेष्ठ; **देवि**—हे देवी; **तदीयानाम्**—भगवान् विष्णु से सम्बन्धित व्यक्तियों की; **समर्चनम्**—दृढ़ पूजा।

अनुवाद

"(शिवजी ने दुर्गा देवी से कहा :) 'हे देवी, यद्यपि वेदों में देवताओं की पूजा की संस्तुति की गई है, लेकिन भगवान् विष्णु की पूजा सर्वोपरि है। किन्तु भगवान् विष्णु की सेवा से भी बढ़कर है उन वैष्णवों की सेवा, जो भगवान् विष्णु से सम्बन्धित हैं।'

तात्पर्य

वेदों के तीन विभाग हैं—कर्म-काण्ड, ज्ञान-काण्ड तथा उपासना-काण्ड। इनसे सम्बन्धित कार्य होते हैं—सकाम कर्म, अनुभवजन्य तर्कवितर्क तथा पूजा। वेदों में विभिन्न देवताओं तथा भगवान् विष्णु की पूजा के लिए संस्तुतियाँ हैं। *पद्म-पुराण* के इस श्लोक के द्वारा शिवजी दुर्गा देवी के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं। यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी कृत *लघु भागवतामृत* (२.४) में भी सम्मिलित है। *विष्णोराराधनम्* शब्द भगवान् विष्णु या कृष्ण की पूजा का द्योतक है। इस तरह पूजा का सर्वोपरि रूप पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण की तुष्टि है। यह भी निष्कर्ष निकाला गया है कि भगवान् कृष्ण के भक्त की पूजा करके भगवान् विष्णु की अधिक अच्छी सेवा की जा सकती है। भक्त कई प्रकार के होते हैं—शान्त रस, दास्य रस, सख्य रस, वात्सल्य रस तथा माधुर्य रस में अवस्थित भक्त। यद्यपि सारे रस दिव्य पद पर हैं, किन्तु माधुर्य रस सर्वोपरि दिव्य रस है। इस तरह निष्कर्ष यह निकला कि माधुर्य रस में भगवान् की भक्ति करने वाले भक्तों की पूजा सर्वोच्च आध्यात्मिक कृत्य है। श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके अनुयायी मुख्यत: माधुर्य रस में ही भगवान् कृष्ण की पूजा करते हैं। अन्य वैष्णव आचार्य वात्सल्य रस तक ही पूजा करने की संस्तुति करते हैं। इसलिए श्रील रूप गोस्वामी अपनी कृति *विदग्ध माधव* (१.२) में श्री चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय को सर्वोच्च मानते हैं :

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्ण: कलौ।
समर्पयितुम् उन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम्॥

श्री चैतन्य महाप्रभु इस कलियुग में माधुर्य रस की सर्वोत्कृष्टता प्रदर्शित करने के लिए प्रकट हुए, जो ऐसा उपहार था जिसे कोई भी आचार्य या अवतार इसके पूर्व भेंट नहीं कर सका था। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु को परम

वदान्य अवतार माना जाता है। उन्होंने ही माधुर्य रस में कृष्ण-प्रेम की उत्कृष्टता दिखलाते हुए कृष्ण-प्रेम का वितरण किया।

दुरापा ह्यल्प-तपसः सेवा वैकुण्ठ-वर्त्मसु ।
यत्रोपगीयते नित्यं देव-देवो जनार्दनः ॥ ३२॥

दुरापा ह्यल्प-तपसः सेवा वैकुण्ठ-वर्त्मसु ।
यत्रोपगीयते नित्यं देव-देवो जनार्दनः ॥ ३२॥

दुरापा—प्राप्त करने में अति कठिन; **हि**—अवश्य; **अल्प-तपसः**—जो आध्यात्मिक जीवन में उन्नत न हो; **सेवा**—सेवा; **वैकुण्ठ-वर्त्मसु**—वैकुण्ठ लौटने वाले व्यक्तियों को; **यत्र**—जहाँ; **उपगीयते**—पूजित होते हैं; **नित्यम्**—सदा; **देव-देवः**—भगवान्, देवों के देव; **जनार्दनः**—भगवान् कृष्ण।

अनुवाद

"'जिनकी तपस्या बहुत कम है, वे भगवद्धाम वापस जाने के मार्ग पर आगे बढ़ते हुए शुद्ध भक्तों की सेवा शायद ही प्राप्त कर सकते हैं। शुद्ध भक्त उन भगवान् की महिमा के गायन में अपना शत-प्रतिशत समय लगाते हैं, जो देवताओं के स्वामी हैं और सारे जीवों के नियन्ता हैं।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (३.७.२०) से लिया गया है। महान् भगवद्भक्त मैत्रेय ऋषि से वार्ता करते हुए विदुर ने इस श्लोक को कहा था।

पुरी, भारती-गोसाञि, स्वरूप, नित्यानन्द ।
जगदानन्द, मुकुन्दादि यत भक्त-वृन्द ॥ ३३॥

पुरी, भारती-गोसाञि, स्वरूप, नित्यानन्द ।
जगदानन्द, मुकुन्दादि यत भक्त-वृन्द ॥ ३३॥

पुरी—परमानन्द पुरी; **भारती**—ब्रह्मानन्द भारती; **गोसाञि**—गुरु के स्तर पर; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **आदि**—तथा अन्य; **यत**—सभी; **भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्त।

अनुवाद

उस समय महाप्रभु के समक्ष परमानन्द पुरी, ब्रह्मानन्द भारती गोसांइ,

स्वरूप दामोदर गोसांइ, नित्यानन्द प्रभु, जगदानन्द, मुकुन्द तथा अन्य भक्त उपस्थित थे।

चारि गोसाञिर कैल राय चरण वन्दन ।
यथा-योग्य सब भक्तेर करिल मिलन ॥३४॥

चारि गोसाञिर कैल राय चरण वन्दन ।
यथा-योग्य सब भक्तेर करिल मिलन ॥ ३४॥

चारि गोसाञिर—चारों गोसांइयों का; **कैल**—किया; **राय**—रामानन्द राय ने; **चरण वन्दन**—चरणवन्दन; **यथा-योग्य**—उचित रूप से; **सब**—सब; **भक्तेर**—भक्तों से; **करिल**—किया; **मिलन**—मिलन।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय ने सभी भक्तों को, विशेषकर चारों गुरुओं को नमस्कार किया और वे अन्य सभी भक्तों से यथायोग्य रूप से मिले।

तात्पर्य

इस श्लोक में जिन चार गुरुओं का उल्लेख है, वे हैं परमानन्द पुरी, ब्रह्मानन्द भारती, स्वरूप दामोदर तथा नित्यानन्द प्रभु।

प्रभु कहे,—राय, देखिले कमल-नयन? ।
राय कहे,—एबे याइ पाव दरशन ॥३५॥

प्रभु कहे,—राय, देखिले कमल-नयन? ।
राय कहे,—एबे याइ पाब दरशन ॥ ३५॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **राय**—मेरे प्रिय रामानन्द राय; **देखिले**—क्या तुमने देखा है; **कमल-नयन**—कमलनयन भगवान् जगन्नाथ को; **राय कहे**—रामानन्द राय ने कहा; **एबे याइ**—अब मैं जाऊँगा; **पाब दरशन**—मैं मन्दिर में दर्शन करूँगा।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय से पूछा, "क्या तुमने कमल जैसे नेत्रों वाले भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर का दर्शन किया है?" रामानन्द राय ने कहा, "अब मैं मन्दिर में दर्शन करने जाऊँगा।"

প্রভু কহে,—রায়, তুমি কি কার্য করিলে? ।
ঈশ্বরে না দেখি' কেনে আগে এথা আইলে? ॥৩৬॥

প্রভু কহে,—রায়, তুমি কি কার্য্য করিলে? ।
ঈশ্বরে না দেখি' কেনে আগে এথা আইলে? ॥ ৩৬ ॥

প্রভু কহে—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **राय**—मेरे प्रिय रामानन्द राय; **तुमि**—तुमने; **कि कार्य्य**—कैसा काम; **करिले**—किया है; **ईश्वरे**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **ना देखि'**—देखे बिना; **केने**—क्यों; **आगे**—पहले; **एथा**—यहाँ; **आइले**—तुम आये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मेरे प्रिय राय, तुमने क्या कर दिया? तुम पहले जगन्नाथजी का दर्शन करने जाते और तब यहाँ आते? तुम पहले यहाँ पर क्यों आये हो?"

রায় কহে, চরণ—রথ, হৃদয়—সারথি ।
যাহাঁ লঞা যায়, তাহাঁ যায় জীব-রথী ॥৩৭॥

রায় কহে, চরণ—রথ, হৃদয়—সারথি ।
যাহাঁ লঞা যায়, তাহাঁ যায় জীব-রথী ॥ ৩৭ ॥

राय कहे—रामानन्द राय ने उत्तर दिया; **चरण**—पैर; **रथ**—रथ; **हृदय**—हृदय; **सारथि**—सारथी; **याहाँ**—जहाँ कहीं; **लञा**—लेकर; **याय**—जाता है; **ताहाँ**—वहाँ; **याय**—जाता है; **जीव-रथी**—रथ पर बैठा जीव।

अनुवाद

रामानन्द राय ने कहा, "चरण रथ के तुल्य हैं, और हृदय रथ चलाने वाले सारथी के समान है। हृदय जीव को जहाँ भी ले जाता है, जीव को वहीं जाना पड़ता है।"

तात्पर्य

भगवद्गीता (१८.६१) में कृष्ण बतलाते हैं :

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥

"हे अर्जुन, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हर एक के हृदय में स्थित हैं और उन सारे जीवों को घुमा रहे हैं, जो भौतिक शक्ति से बने यंत्र पर सवार हैं।"

इस तरह जीव भौतिक प्रकृति द्वारा प्रदत्त रथ (शरीर) पर सवार होकर इस ब्रह्माण्ड के भीतर घूम रहा है। *कठ उपनिषद्* (१.३.३,४) में भी ऐसी ही व्याख्या हुई है :

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः॥

यहाँ कहा गया है कि प्राणी भौतिक प्रकृति द्वारा प्रदत्त शरीर रूपी रथ में सवार यात्री है और बुद्धि रथ को चलाने वाली (सारथी) है। मन घोड़ों को नियंत्रित करने वाली लगाम है और इन्द्रियाँ घोड़े हैं। इस तरह आत्मा भौतिक संसार का झूठा भोक्ता है।"

जो व्यक्ति कृष्णभावना में उन्नत है, वह मन तथा बुद्धि पर नियन्त्रण रख सकता है। दूसरे शब्दों में, वह घोड़ों (इन्द्रियों) पर नियन्त्रण रख सकता है, भले ही घोड़े कितने ही शक्तिशाली क्यों न हों। जिस व्यक्ति का अपने मन और बुद्धि द्वारा इन्द्रियों पर नियन्त्रण रहता है, वह आसानी से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् या विष्णु तक पहुँच सकता है, जो जीवन के परम लक्ष्य हैं। *तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः।* जो वास्तव में उन्नत हैं, वे अपने परम गन्तव्य भगवान् विष्णु के पास पहुँचते हैं। ऐसे लोग भगवान् विष्णु की बहिरंगा शक्ति अर्थात् भौतिक जगत् द्वारा कभी मोहित नहीं होते।

আমি কি করিব, মন ইহাঁ লঞা আইল ।
জগন্নাথ-দরশনে বিচার না কৈল ॥৩৮॥

आमि कि करिब, मन इहाँ लञा आइल ।
जगन्नाथ-दरशने विचार ना कैल ॥ ३८ ॥

आमि—मैं; **कि**—क्या; **करिब**—करूँ; **मन**—मेरा मन; **इहाँ**—यहाँ; **लञा**—ले; **आइल**—आया; **जगन्नाथ-दरशने**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शनार्थ; **विचार**—विचार; **ना**—नहीं; **कैल**—किया।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय कहते गये, "मैं क्या करूँ? मेरा मन मुझे यहाँ ले आया। मैं पहले जगन्नाथजी के मन्दिर जाने की बात सोच ही न सका।"

प्रभु कहे,—शीघ्र गिया कर दरशन ।
ऐछे घर याइ' कर कुटुम्ब मिलन ॥ ३९॥

प्रभु कहे,—शीघ्र गिया कर दरशन ।
ऐछे घर याइ' कर कुटुम्ब मिलन ॥ ३९॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **शीघ्र गिया**—शीघ्र जाकर; **कर दरशन**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करो; **ऐछे**—इसी प्रकार; **घर याइ'**—घर जाकर; **कर**—करो; **कुटुम्ब**—परिवार से; **मिलन**—मिलन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने परामर्श दिया, "भगवान् का दर्शन करने तुरन्त जगन्नाथ मन्दिर में जाओ। तब तुम घर जाकर अपने परिवार वालों से मिलो।"

प्रभु आज्ञा पाञा राय चलिला दरशने ।
रायेर प्रेम-भक्ति-रीति बुझे कोन्जने ॥ ४०॥

प्रभु आज्ञा पाञा राय चलिला दरशने ।
रायेर प्रेम-भक्ति-रीति बुझे कोन्जने ॥ ४०॥

प्रभु आज्ञा—महाप्रभु की आज्ञा; **पाञा**—पाकर; **राय**—रामानन्द राय; **चलिला**—चले गये; **दरशने**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करने; **रायेर**—रामानन्द राय के; **प्रेम-भक्ति**—कृष्ण-प्रेम के आवेश की; **रीति**—प्रक्रिया; **बुझे**—समझ सकता है; **कोन् जने**—कौन व्यक्ति।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा पाकर रामानन्द राय शीघ्रतापूर्वक जगन्नाथ मन्दिर गये। भला रामानन्द राय की भक्ति को कौन समझ सकता है?

ক্ষেত্রে আসি' রাজা সার্বভৌমে বোলাইলা ।
সার্বভৌমে নমস্করি' তাঁহারে পুছিলা ॥ ৪১ ॥

ক্ষেত্রে আসি' রাজা সার্বভৌমে বোলাইলা ।
সার্বভৌমে নমস্করি' তাঁহারে পুছিলা ॥ ৪১ ॥

क्षेत्रे—जगन्नाथ पुरी; **आसि'**—आकर; **राजा**—राजा; **सार्वभौमे**—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **बोलाइला**—बुलाया; **सार्वभौमे**—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **नमस्करि'**—नमस्कार करके; **ताँहारे पुछिला**—उनसे पूछा।

अनुवाद

जब राजा प्रतापरुद्र लौटकर जगन्नाथ पुरी आये, तो उन्होंने सार्वभौम भट्टाचार्य को बुलवाया। जब भट्टाचार्य राजा से भेंट करने गये, तो राजा ने उन्हें नमस्कार किया और उनसे पूछा।

মোর লাগি' প্রভু-পদে কৈলে নিবেদন? ।
সার্বভৌম কহে,—কৈনু অনেক যতন ॥ ৪২ ॥

মোর লাগি' প্রভু-পদে কৈলে নিবেদন? ।
সার্বভৌম কহে,—কৈনু অনেক যতন ॥ ৪২ ॥

मोर लागि'—मेरी ओर से; **प्रभु-पदे**—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **कैले निवेदन**—आपने निवेदन किया है; **सार्वभौम कहे**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया; **कैनु**—मैंने किए; **अनेक यतन**—अनेक प्रयास।

अनुवाद

राजा ने पूछा, "क्या आपने महाप्रभु के समक्ष मेरा निवेदन प्रस्तुत किया?" सार्वभौम ने उत्तर दिया, "हाँ, मैंने भरसक प्रयत्न किया है।

তথাপি না করে তেঁহ রাজ-দরশন ।
ক্ষেত্র ছাড়ি' যাবেন পুনঃ যদি করি নিবেদন ॥ ৪৩ ॥

তথাপি না করে তেঁহ রাজ-দরশন ।
ক্ষেত্র ছাড়ি' যাবেন পুনঃ যদি করি নিবেদন ॥ ৪৩ ॥

तथापि—तथापि; **ना करे**—नहीं करते; **तेंह**—वे; **राज-दरशन**—राजा से भेंट; **क्षेत्र**

छाड़ि'—जगन्नाथ क्षेत्र को छोड़कर; **याबेन**—वे जायेंगे; **पुनः**—दोबारा; **यदि**—यदि; **करि निवेदन**—मैं निवेदन करूँ।

अनुवाद

"मेरे अथक प्रयास के बावजूद भी महाप्रभु राजा से मिलने के लिए राजी नहीं हैं। उन्होंने कहा कि यदि उनसे फिर से पूछा गया, तो वे जगन्नाथ पुरी छोड़कर अन्यत्र चले जायेंगे।"

শুনিয়া রাজার মনে দুঃখ উপজিল ।
বিষাদ করিয়া কিছু কহিতে লাগিল ॥ ৪৪ ॥

शुनिया राजार मने दुःख उपजिल ।
विषाद करिया किछु कहिते लागिल ॥ ४४ ॥

शुनिया—सुनकर; **राजार**—राजा के; **मने**—मन में; **दुःख**—दुःख; **उपजिल**—उठा; **विषाद**—शोक; **करिया**—करके; **किछु**—कुछ; **कहिते**—कहने; **लागिल**—लगे।

अनुवाद

यह सुनकर राजा अत्यन्त दुःखी हुए और शोक करते हुए इस प्रकार बोले।

পাপী নীচ উদ্ধারিতে তাঁর অবতার ।
জগাই মাধাই তেঁহ করিলা উদ্ধার ॥ ৪৫ ॥

पापी नीच उद्धारिते ताँर अवतार ।
जगाइ माधाइ तेंह करिला उद्धार ॥ ४५ ॥

पापी—पापी; **नीच**—नीच; **उद्धारिते**—उद्धार करने के लिए; **ताँर**—उनका; **अवतार**—अवतार; **जगाइ**—जगाइ; **माधाइ**—माधाइ; **तेंह**—उन्होंने; **करिला उद्धार**—उद्धार किया।

अनुवाद

राजा ने कहा : "श्री चैतन्य महाप्रभु सभी प्रकार के पापी एवं निम्न पुरुषों का उद्धार करने के लिए ही अवतरित हुए हैं। फलस्वरूप उन्होंने जगाइ तथा माधाइ जैसे पापियों का उद्धार किया है।

প্রতাপরুদ্র ছাড়ি' করিবে জগত্নিস্তার ।
এই প্রতিজ্ঞা করি' করিয়াছেন অবতার? ॥ ৪৬॥

प्रतापरुद्र छाड़ि' करिबे जगत्निस्तार ।
एइ प्रतिज्ञा करि' करियाछेन अवतार? ॥ ४६ ॥

प्रतापरुद्र छाड़ि'—प्रतापरूद्र के अतिरिक्त; **करिबे**—वे करेंगे; **जगत्**—सारे संसार का; **निस्तार**—उद्धार; **एइ प्रतिज्ञा**—यह प्रतिज्ञा; **करि'**—करके; **करियाछेन**—लिया है; **अवतार**—अवतार।

अनुवाद

"हाय, क्या श्री चैतन्य महाप्रभु महाराज प्रतापरुद्र नामक राजा के अतिरिक्त अन्य सभी पापियों के ही उद्धार के लिए अवतरित हुए हैं?"

तात्पर्य

श्री नरोत्तम दास ठाकुर ने श्री चैतन्य महाप्रभु के उद्देश्य का वर्णन इस प्रकार किया है : *पतित-पावन-हेतु तव अवतार / मो-सम पतित प्रभु ना पाइबे आर।* यदि श्री चैतन्य महाप्रभु का अवतार पापियों का उद्धार करने के लिए हुआ है, तो जो सबसे बड़ा पापी है और निम्न कुल में उत्पन्न हुआ है, उस पर महाप्रभु पहले ध्यान देते हैं। महाराज प्रतापरुद्र अपने आपको सबसे पतित जीव मानते थे, क्योंकि उन्हें निरन्तर भौतिक बातों में लगे रहना पड़ता था और भौतिक लाभों का भोग करना होता था। श्री चैतन्य महाप्रभु का कार्य ही था सर्वाधिक पतित का उद्धार करना। तो फिर उन्होंने राजा का उद्धार करने से क्यों मना किया? जो मनुष्य जितना अधिक पतित होता है, उसे महाप्रभु द्वारा उद्धार किये जाने का उतना ही अधिक अधिकार होता है, बशर्ते कि वह महाप्रभु की शरण ग्रहण कर ले। महाराज प्रतापरुद्र पूर्णरूपेण शरणागत जीव थे, अतएव महाप्रभु उन्हें इस आधार पर मना नहीं कर सकते थे कि वे सांसारिक धनी व्यक्ति हैं।

অদর্শনীয়ানপি নীচ-জাতীন্
সংবীক্ষতে হন্ত তথাপি নো মাম্ ।
মদেক-বর্জং কৃপয়িষ্যতীতি
নির্ণীয় কিং সোঽবততার দেবঃ ॥ ৪৭॥

अदर्शनीयानपि नीच-जातीन्
संवीक्षते हन्त तथापि नो माम् ।
मदेक-वर्जं कृपयिष्यतीति
निर्णीय किं सोऽवततार देवः ॥ ४७॥

अदर्शनीयान्—जो देखने के योग्य न हो; **अपि**—यद्यपि; **नीच-जातीन्**—नीच जाति के लोग; **संवीक्षते**—अपनी दयापूर्ण दृष्टि डालते हैं; **हन्त**—खेद है; **तथा अपि**—फिर भी; **न उ**—नहीं; **माम्**—मुझ पर; **मत्**—मुझे; **एक**—अकेले; **वर्जम्**—त्यागकर; **कृपयिष्यति**—वे अपनी कृपा करेंगे; **इति**—इस प्रकार; **निर्णीय**—यह निर्णय लेकर; **किम्**—क्या; **सः**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **अवततार**—अवतार लिया है; **देवः**—भगवान्।

अनुवाद

"'हाय! क्या श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह निर्णय लेकर अवतार लिया है कि वे मेरे अतिरिक्त अन्य सबका उद्धार करेंगे? वे अपनी कृपादृष्टि ऐसे अनेक निम्न जाति के व्यक्तियों पर डालते हैं, जिन्हें देखना भी वर्जित है।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्री चैतन्य-चन्द्रोदय नाटक* (८.२८) से लिया गया है।

তাঁর প্রতিজ্ঞা—মোরে না করিবে দরশন ।
মোর প্রতিজ্ঞা—তাঁহা বিনা ছাড়িব জীবন ॥ ৪৮॥

তাঁর প্রতিজ্ঞা—মোরে না করিবে দরশন ।
মোর প্রতিজ্ঞা—তাঁহা বিনা ছাড়িব জীবন ॥ ৪৮॥

তাঁর প্রতিজ্ঞা—उनकी प्रतिज्ञा; **मोरे**—मेरा; **ना**—नहीं; **करिबे**—करेंगे; **दरशन**—दर्शन; **मोर प्रतिज्ञा**—मेरी प्रतिज्ञा; **ताँहा विना**—उनके बिना; **छाड़िब**—मैं त्याग दूँगा; **जीवन**—जीवन।

अनुवाद

महाराज प्रतापरुद्र ने आगे कहा, "यदि श्री चैतन्य महाप्रभु ने मुझे न देखने का संकल्प ले रखा है, तो मैं भी कृतसंकल्प हूँ कि यदि मैं उनका दर्शन नहीं पाता, तो मैं अपना जीवन त्याग दूँगा।

तात्पर्य

महाराज प्रतापरुद्र जैसे संकल्प वाला भक्त कृष्णभावनामृत में आगे बढ़ने में निश्चय ही विजयी होगा। इसकी पुष्टि *भगवद्गीता* (९.१४) में श्रीकृष्ण करते हैं :

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥

"ये महात्मा सदैव मेरे यश को गाते हुए, दृढ़ संकल्प के साथ प्रयत्न करते हुए, मेरे समक्ष नतमस्तक होकर निरन्तर भक्तिपूर्वक मेरी पूजा करते हैं।"

ये उस महात्मा के लक्षण हैं, जो पूर्णरूपेण कृष्णभावना में भगवान् की सेवा में लगा रहता है। इस प्रकार महाराज प्रतापरुद्र का संकल्प अत्यन्त प्रशंसनीय है और *दृढव्रत* कहलाता है। इसी दृढ़ संकल्प के कारण वे भगवान् चैतन्य की प्रत्यक्ष कृपा प्राप्त करने में सफल हुए।

यदि सेइ महाप्रभुर ना पाइ कृपा-धन ।
किबा राज्य, किबा देह,—सब अकारण ॥ ४९॥

यदि सेइ महाप्रभुर ना पाइ कृपा-धन ।
किबा राज्य, किबा देह,—सब अकारण ॥ ४९॥

यदि—यदि; **सेइ**—उन; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **ना**—नहीं; **पाइ**—मैं पाता; **कृपा-धन**—कृपा धन; **किबा राज्य**—मेरे राज्य का क्या मूल्य; **किबा देह**—इस देह का क्या मूल्य; **सब अकारण**—प्रत्येक वस्तु निरर्थक।

अनुवाद

"यदि मुझे श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा प्राप्त नहीं होती, तो मेरा शरीर तथा मेरा राज्य निश्चित रूप से व्यर्थ हैं।"

तात्पर्य

यह *दृढव्रत* का सर्वोत्तम उदाहरण है। जिसे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की कृपा प्राप्त नहीं हो पाती, उसका जीवन व्यर्थ है। *श्रीमद्भागवत* (५.५.५) में कहा गया है— *पराभवस्तावदबोधजातो यावन्न जिज्ञासत आत्मतत्त्वम्।* यदि कोई आध्यात्मिक जीवन के बारे में जिज्ञासा नहीं करता, तो उसका सब कुछ व्यर्थ

है। आध्यात्मिक जिज्ञासा के बिना हमारा श्रम तथा हमारे श्रम का लक्ष्य समय के अपव्यय मात्र हैं।

এত শুনি' সার্বভৌম হইলা চিন্তিত ।
রাজার অনুরাগ দেখি' হইলা বিস্মিত ॥৫০॥

এত শুনি' সার্বভৌম হইলা চিন্তিত ।
রাজার অনুরাগ দেখি' হইলা বিস্মিত ॥৫০॥

এত শুনি'—यह सुनकर; **সার্বভৌম**—सार्वभौम; **হইলা**—हो गये; **চিন্তিত**—अत्यन्त चिन्तित; **রাজার**—राजा का; **অনুরাগ**—अनुराग; **দেখি'**—देखकर; **হইলা**—हो गये; **বিস্মিত**—चकित।

अनुवाद

राजा प्रतापरुद्र के संकल्प को सुनकर सार्वभौम चिन्तित हो उठे। वे राजा के संकल्प को देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित हो गये।

तात्पर्य

सार्वभौम भट्टाचार्य विस्मित थे, क्योंकि भौतिक भोग में लिप्त रहने वाले दुनियावी व्यक्ति के लिए ऐसा संकल्प कर पाना सम्भव नहीं है। राजा को भौतिक आनन्द भोगने के लिए प्रचुर अवसर प्राप्त था, किन्तु वे सोच रहे थे कि यदि उन्हें महाप्रभु के दर्शन नहीं होते, तो सब कुछ व्यर्थ है। यह विस्मित होने के लिए पर्याप्त कारण है। *श्रीमद्भागवत* में कहा गया है कि भक्ति को अहैतुकी होना चाहिए। कोई भी भौतिक अवरोध वास्तव में भक्ति की प्रगति को नहीं रोक सकता, यह भक्ति चाहे सामान्य व्यक्ति द्वारा सम्पन्न हो, चाहे राजा द्वारा। प्रत्येक दशा में भगवद्भक्ति सदैव पूर्ण होती है, चाहे भक्त किसी भी भौतिक पद पर हो। भक्ति इतनी उच्च होती है कि किसी भी पद पर रहते हुए इसे सम्पन्न की जा सकती है। हाँ, मनुष्य को *दृढव्रत* होना चाहिए।

ভট্টাচার্য কহে—দেব না কর বিষাদ ।
তোমারে প্রভুর অবশ্য হইবে প্রসাদ ॥৫১॥

ভট্টাচার্য্য কহে—দেব না কর বিষাদ ।
তোমারে প্রভুর অবশ্য হইবে প্রসাদ ॥৫১॥

भट्टाचार्य्य कहे—भट्टाचार्य ने कहा; **देव**—हे राजा; **ना कर विषाद**—शोक न करें; **तोमारे**—आपको; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **अवश्य**—अवश्य; **हइबे**—होगी; **प्रसाद**—कृपा।

अनुवाद

अन्त में सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "हे राजन्! आप चिन्ता न करें। आपके दृढ़ संकल्प के कारण आपको श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा अवश्य प्राप्त होगी।"

तात्पर्य

राजा प्रतापरुद्र के दृढ़ संकल्प के कारण भट्टाचार्य ने भविष्यवाणी की कि राजा को अवश्य ही महाप्रभु की कृपा प्राप्त होगी। जैसाकि *चैतन्य-चरितामृत* में अन्यत्र (मध्य १९.१५१ में) कहा गया है—*गुरु-कृष्ण-प्रसादे पाय भक्ति-लता-बीज*—"गुरु तथा कृष्ण की कृपा से मनुष्य को भक्ति का बीज प्राप्त होता है।" भट्टाचार्य राजा प्रतापरुद्र के गुरु थे और उन्होंने यह आशीर्वाद दिया कि महाप्रभु राजा पर कृपालु होंगे। गुरु तथा कृष्ण की कृपा मिलकर कृष्णभावनामृत में लगे भक्त को सफलता दिलाती है। इसकी पुष्टि वेदों से होती है :

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥

"जिन महात्माओं की भगवान् तथा गुरु दोनों में अटूट श्रद्धा होती है, उन्हीं को सारा वैदिक ज्ञान स्वतः प्रकट होता है।" (*श्वेताश्वतर उपनिषद्* ६.२३)

महाराज प्रतापरुद्र को भट्टाचार्य पर अटूट श्रद्धा थी, क्योंकि भट्टाचार्य ने श्री चैतन्य महाप्रभु को भगवान् घोषित कर दिया था। भट्टाचार्य पर अपने गुरु के रूप में अटूट श्रद्धा होने के कारण राजा प्रतापरुद्र ने तुरन्त ही श्री चैतन्य महाप्रभु को भगवान् के रूप में स्वीकार कर लिया और श्री चैतन्य महाप्रभु की मन ही मन पूजा करनी शुरू कर दी। भक्ति की यही विधि है। *भगवद्गीता* (९.३४) में भगवान् कृष्ण के अनुसार :

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥

"तुम अपने मन को सदैव मेरे चिन्तन में लगाओ, मेरे भक्त बनो, मुझे नमस्कार

करो और मेरी पूजा करो। इस तरह मुझमें पूर्णतया मग्न होने पर तुम मेरे पास अवश्य आओगे।"

यह विधि अत्यन्त सरल है। बस, गुरु द्वारा उसे इसका दृढ़ विश्वास प्राप्त होना चाहिए कि कृष्ण ही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। ऐसा निश्चय कर लेने पर मनुष्य कृष्ण का चिन्तन, उनका कीर्तन तथा उनकी महिमा का गायन करके आगे उन्नति कर सकता है। इसमें सन्देह नहीं है कि ऐसे पूर्णतया शरणागत भक्त को भगवान् कृष्ण का आशीर्वाद प्राप्त होगा। श्रील सार्वभौम भट्टाचार्य इसकी और अधिक व्याख्या करते हैं।

तेँह—प्रेमाधीन, तोमार प्रेम—गाढ़तर ।
अवश्य करिबेन कृपा तोमार उपर ॥५२॥

तेंह—प्रेमाधीन, तोमार प्रेम—गाढ़तर ।
अवश्य करिबेन कृपा तोमार उपर ॥५२॥

तेंह—वे (श्री चैतन्य महाप्रभु); **प्रेम-अधीन**—प्रेम के अधीन; **तोमार प्रेम**—आपका प्रेम; **गाढ़-तर**—बहुत गहन; **अवश्य**—अवश्य; **करिबेन कृपा**—वे कृपा करेंगे; **तोमार उपर**—आपके ऊपर।

अनुवाद

जब भट्टाचार्य ने राजा के दृढ़ संकल्प को जान लिया, तो उन्होंने घोषित किया, "केवल शुद्ध प्रेम से भगवान् तक पहुँचा जा सकता है। श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति आपका प्रेम अत्यन्त गहरा है, अतएव वे आप पर अवश्य ही कृपा करेंगे।"

तात्पर्य

ऐसा संकल्प पहली योग्यता है। इसकी पुष्टि रूप गोस्वामी ने *उपदेशामृत* (३) में की है—*उत्साहान् निश्चयाद् धैर्यात्।* मनुष्य में प्रथम तो दृढ़ संकल्प, दृढ़ विश्वास होना चाहिए। मनुष्य को भक्ति में लगने पर यह दृढ़ संकल्प बनाये रखना चाहिए। तभी कृष्ण उसकी सेवा से प्रसन्न होंगे। गुरु तो भक्ति का मार्ग दिखला सकता है। यदि शिष्य इन सिद्धान्तों का पालन बिना विचलित हुए दृढ़तापूर्वक करता है, तो उसे कृष्ण-कृपा अवश्य प्राप्त होगी। इसकी पुष्टि शास्त्रों से होती है।

तथापि कहिये आमि एक उपाय ।
एई उपाय कर' प्रभु देखिबे याहाय ॥५३॥

तथापि कहिये आमि एक उपाय ।
एइ उपाय कर' प्रभु देखिबे याहाय ॥५३॥

तथापि—फिर भी; **कहिये**—कहता हूँ; **आमि**—मैं; **एक उपाय**—एक उपाय; **एइ उपाय**—यह उपाय; **कर'**—करने का प्रयास करो; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **देखिबे**—आपसे मिलेंगे; **याहाय**—उससे।

अनुवाद

तब सार्वभौम ने सुझाया, "एक उपाय है, जिससे आप उनका प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं।

रथ-यात्रा-दिने प्रभु सब भक्त लञा ।
रथ-आगे नृत्य करिबेन प्रेमाविष्ट हञा ॥५४॥

रथ-यात्रा-दिने प्रभु सब भक्त लञा ।
रथ-आगे नृत्य करिबेन प्रेमाविष्ट हञा ॥५४॥

रथ-यात्रा-दिने—रथयात्रा के दिन; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सब**—सब; **भक्त**—भक्तों को; **लञा**—अपने साथ लेकर; **रथ**—रथ; **आगे**—के आगे; **नृत्य करिबेन**—नृत्य करेंगे; **प्रेम-आविष्ट हञा**—प्रेमावेश में आकर।

अनुवाद

"रथयात्रा के दिन श्री चैतन्य महाप्रभु बड़े ही भावावेश में अर्चाविग्रह के समक्ष नृत्य करेंगे।

प्रेमावेशे पुष्पोद्याने करिबेन प्रवेश ।
सेई-काले एकले तुमि छाड़ि' राज-वेश ॥५५॥

प्रेमावेशे पुष्पोद्याने करिबेन प्रवेश ।
सेइ-काले एकले तुमि छाड़ि' राज-वेश ॥५५॥

प्रेम-आवेशे—प्रेमावेश में; **पुष्प-उद्याने**—गुण्डीचा उद्यान में जहाँ भगवान् रहते हैं; **करिबेन प्रवेश**—प्रवेश करेंगे; **सेइ-काले**—उस समय; **एकले**—अकेले; **तुमि**—आप; **छाड़ि'**—त्यागकर; **राज-वेश**—राजसी वेशभूषा।

अनुवाद

"उस रथयात्रा के दिन भगवान् जगन्नाथ के समक्ष नृत्य करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु गुण्डीचा उद्यान में जायेंगे। उस समय आप अपना राजसी वेश उतारकर अकेले ही वहाँ जायें।

'कृष्ण-रास-पञ्चाध्याय' करिते पठन ।
एकले याइ' महाप्रभुर धरिबे चरण ॥५६॥

'कृष्ण-रास-पञ्चाध्याय' करिते पठन ।
एकले याइ' महाप्रभुर धरिबे चरण ॥५६॥

कृष्ण-रास-पञ्च-अध्याय—*श्रीमद्भागवत* के दसवें स्कन्ध के पाँच अध्याय जिनमें भगवान् कृष्ण की रासनृत्य की लीलाओं का वर्णन है; **करिते पठन**—पढ़ना; **एकले याइ'**—अकेले जाकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **धरिबे चरण**—चरणकमल पकड़ लेना।

अनुवाद

"जब श्री चैतन्य महाप्रभु गुण्डीचा उद्यान में प्रवेश करें, तभी आप भी वहाँ जायें और *श्रीमद्भागवत्* के उन पाँच अध्यायों को पढ़ें, जिनमें गोपियों के साथ कृष्ण के रासनृत्य का वर्णन है। इस तरह आप महाप्रभु के चरणकमलों को पकड़ सकते हैं।

बाह्य-ज्ञान नाहि, से-काले कृष्ण-नाम शुनि, ।
आलिङ्गन करिबेन तोमाय 'वैष्णव' 'जानि' ॥५७॥

बाह्य-ज्ञान नाहि, से-काले कृष्ण-नाम शुनि, ।
आलिङ्गन करिबेन तोमाय 'वैष्णव' 'जानि' ॥५७॥

बाह्य-ज्ञान नाहि—बाहरी चेतना से रहित; **से-काले**—उस समय; **कृष्ण-नाम शुनि'**—भगवान् कृष्ण का पावन नाम सुनने से; **आलिङ्गन करिबेन**—वे गले लगा लेंगे; **तोमाय**—आपको; **वैष्णव जानि'**—वैष्णव समझकर।

अनुवाद

"प्रेमाविष्ट होने के कारण श्री चैतन्य महाप्रभु को बाहरी सुधि-बुधि नहीं रहेगी। उसी समय आप श्रीमद्भागवत के वे अध्याय सुनाना शुरू करें। तब वे आपको शुद्ध वैष्णव जानकर गले लगा लेंगे।

तात्पर्य

एक वैष्णव दूसरे वैष्णव को परम सत्य के साक्षात्कार की ओर अग्रसर कराने में सहायक बनने के लिए सदैव तत्पर रहता है। सार्वभौम भट्टाचार्य जानते थे कि राजा शुद्ध वैष्णव है। राजा श्री चैतन्य महाप्रभु के विषय में निरन्तर सोचते रहते हैं, इसीलिए महाप्रभु के निकट पहुँचने में भट्टाचार्य उनकी सहायता करना चाहते थे। एक वैष्णव सदैव दयालु होता है, और जब वह किसी भावी भक्त को *दृढ़व्रत* देखता है, तो वह विशेष रूप से दयालु हो जाता है। फलस्वरूप भट्टाचार्य राजा की सहायता करने के लिए प्रस्तुत थे।

रामानन्द राय, आजि तोमार प्रेम-गुण ।
प्रभु-आगे कहिते प्रभुर फिरि' गेल मन ॥५८॥

रामानन्द राय, आजि तोमार प्रेम-गुण ।
प्रभु-आगे कहिते प्रभुर फिरि' गेल मन ॥५८॥

रामानन्द राय—रामानन्द राय; **आजि**—आज; **तोमार**—आपके; **प्रेम-गुण**—प्रेम के गुण; **प्रभु-आगे**—महाप्रभु के समक्ष; **कहिते**—जब उन्होंने कहा; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **फिरि' गेल**—परिवर्तन हो गया; **मन**—मन।

अनुवाद

"रामानन्द राय ने उनसे आपके प्रेम का जो विवरण दिया है, उससे महाप्रभु ने पहले ही अपना मन बदल लिया है।"

तात्पर्य

पहले महाप्रभु राजा को मिलना ही नहीं चाहते थे, किन्तु भट्टाचार्य तथा रामानन्द राय के सच्चे प्रयास के फलस्वरूप उनका मन (विचार) बदल गया। महाप्रभु ने पहले ही घोषित कर दिया था कि भक्तों की सेवा करने के कारण राजा पर कृष्ण कृपालु होंगे। यही विधि है कृष्णभावनामृत में प्रगति करने की। सर्वप्रथम भक्त की कृपा होनी चाहिए, फिर तो कृष्ण-कृपा अवतरित होगी ही। *यस्य प्रसादाद् भगवत्प्रसादो / यस्याप्रसादान् न गतिः कुतोऽपि।* अतएव हमारा पहला कर्तव्य यह है कि हम गुरु को तुष्ट करें, जो भगवान् की कृपा की व्यवस्था करता है। सामान्य व्यक्ति को पहले वह गुरु या भक्त की सेवा करनी

शुरु करनी चाहिए। फिर भक्त की कृपा से भगवान् तुष्ट होंगे। भक्त के चरणकमलों की धूल को सिर पर धारण किये बिना उन्नति की आशा करना व्यर्थ है। इसकी पुष्टि *श्रीमद्भागवत* (७.५.३२) में प्रह्लाद महाराज के कथन से हो जाती है :

नैषां मतिस्तावद् उरुक्रमाङ्घ्रिं
स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं
निष्किञ्चनानां न वृणीत यावत्॥

शुद्ध भक्त के पास गये बिना मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को नहीं समझ सकता। महाराज प्रतापरुद्र ने रामानन्द राय तथा सार्वभौम भट्टाचार्य दोनों की पूजा की। इस तरह उन्होंने शुद्ध भक्तों के चरणकमलों का स्पर्श किया, जिससे वे श्री चैतन्य महाप्रभु के निकट पहुँचने में समर्थ हो सके।

শুনি' গজপতির মনে সুখ উপজিল ।
প্রভুরে মিলিতে এই মন্ত্রণা দৃঢ় কৈল ॥৫৯॥

শুনি' গজপতির মনে সুখ উপজিল ।
প্রভুরে মিলিতে এइ মন্ত্রণা দৃঢ় কৈল ॥৫৯॥

শুনি'—सुनकर; **গজপতির**—राजा प्रतापरुद्र के; **মনে**—मन में; **সুখ**—हर्ष; **উপজিল**—उपजा; **প্রভুরে**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **মিলিতে**—मिलने के लिए; **এइ**—यह; **মন্ত্রণা**—सुझाव; **দৃঢ় কৈল**—दृढ़ता से पालन करने का निर्णय लिया।

अनुवाद

महाराज प्रतापरुद्र ने भट्टाचार्य का परामर्श मान लिया और उनके आदेशों का पालन करने का दृढ़ निश्चय किया। इस तरह उन्हें दिव्य सुख का अनुभव हुआ।

স্নান-যাত্রা কবে হবে পুছিল ভট্টেরে ।
ভট্ট কহে,—তিন দিন আছয়ে যাত্রারে ॥৬০॥

স্নান-যাত্রা কবে হবে পুছিল ভট্টেরে ।
ভট্ট কহে,—তিন দিন আছয়ে যাত্রারে ॥৬০॥

स्नान-यात्रा—भगवान् जगन्नाथ का स्नानोत्सव; **कबे**—कब; **हबे**—होगा; **पुछिल**—उन्होंने पूछा; **भट्टेरे**—भट्टाचार्य से; **भट्ट कहे**—भट्टाचार्य ने कहा; **तिन दिन**—तीन दिन; **आछये**—अभी बाकी हैं; **यात्रारे**—उत्सव में।

अनुवाद

जब राजा ने भट्टाचार्य से पूछा कि भगवान् जगन्नाथ को नहलाने का उत्सव (स्नान-यात्रा) कब होगा, तो भट्टाचार्य ने बतलाया कि इस उत्सव के होने में केवल तीन दिन शेष हैं।

রাজারে প্রবোধিয়া ভট্ট গেলা নিজালয় ।
স্নান-যাত্রা-দিনে প্রভুর আনন্দ হৃদয় ॥ ৬১ ॥

রাজারে প্রবোধিয়া ভট্ট গেলা নিজালয় ।
স্নান-যাত্রা-দিনে প্রভুর আনন্দ হৃদয় ॥ ৬১ ॥

राजारे—राजा को; **प्रबोधिया**—प्रोत्साहन देकर; **भट्ट**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **गेला**—चल गये; **निज-आलय**—अपने घर को; **स्नान-यात्रा-दिने**—स्नान यात्रा के दिन; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **आनन्द**—आनन्द से भर गया; **हृदय**—हृदय।

अनुवाद

इस तरह राजा को प्रोत्साहित करके सार्वभौम भट्टाचार्य अपने घर चले गये। भगवान् जगन्नाथ की स्नान-यात्रा के दिन श्री चैतन्य महाप्रभु हृदय से परम प्रसन्न थे।

স্নান-যাত্রা দেখি' প্রভুর হৈল বড় সুখ ।
ঈশ্বরের 'অনবসরে' পাইল বড় দুঃখ ॥ ৬২ ॥

স্নান-যাত্রা দেখি' প্রভুর হৈল বড় সুখ ।
ঈশ্বরের 'অনবসরে' পাইল বড় দুঃখ ॥ ৬২ ॥

स्नान-यात्रा—भगवान् जगन्नाथ का स्नानोत्सव; **देखि'**—देखकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **हैल**—हुआ; **बड़**—बहुत; **सुख**—आनन्द; **ईश्वरेर**—भगवान् का; **अनवसरे**—विश्राम की लीला के दौरान; **पाइल**—मिला; **बड़**—अत्यन्त; **दुःख**—दुःख।

अनुवाद

भगवान् जगन्नाथ की स्नान-यात्रा देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त

प्रसन्न हुए। किन्तु जब उत्सव के बाद भगवान् जगन्नाथ विश्राम करने चले गये, तब भगवान् चैतन्य अत्यन्त दुःखी हो गये, क्योंकि वे उनका दर्शन नहीं पा सके।

तात्पर्य

श्री जगन्नाथ की स्नान-यात्रा रथयात्रा महोत्सव से एक पखवाड़ा पहले होती है। उसके बाद भगवान् जगन्नाथ के अर्चाविग्रह को फिर से रंगा जाता है, जिसमें लगभग एक पखवाड़ा लग जाता है। यह अवधि अनवसर कहलाती है। ऐसे अनेक लोग होते हैं, जो जगन्नाथजी के दर्शन हेतु नित्यप्रति मन्दिर में जाते हैं। उनके लिए स्नान-यात्रा के बाद की यह विश्रामावस्था (अनवसर) असह्य हो उठती है। श्री चैतन्य महाप्रभु को मन्दिर में से जगन्नाथजी की अनुपस्थिति अत्यन्त खलने वाली लगी।

गोपी-भावे विरहे प्रभु व्याकुल हञा ।
आलालनाथे गेला प्रभु सबारे छाड़िया ॥ ६३ ॥

गोपी-भावे—गोपीयों के भाव में; **विरहे**—विरह में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **व्याकुल**—व्याकुल; **हञा**—होकर; **आलालनाथे**—आलालनाथ; **गेला**—चले गये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सबारे**—सबको; **छाड़िया**—छोड़कर।

अनुवाद

भगवान् जगन्नाथ से विलग होने के कारण श्री चैतन्य महाप्रभु को वैसी ही व्याकुलता का अनुभव हुआ, जैसी कि कृष्ण के वियोग में गोपियों को हुई थी। ऐसी अवस्था में उन्होंने सबका संग छोड़ दिया और आलालनाथ चले गये।

पाछे प्रभुर निकट आइला भक्त-गण ।
गौड़ हैते भक्त आइसे,—कैल निवेदन ॥ ६४ ॥

पाछे प्रभुर निकट आइला भक्त-गण ।
गौड़ हैते भक्त आइसे,—कैल निवेदन ॥ ६४ ॥

पाछे—पीछे; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **निकट**—निकट; **आइला**—आये; **भक्त-गण**—भक्त; **गौड़ हैते**—बंगाल से; **भक्त**—भक्त; **आइसे**—आये हैं; **कैल निवेदन**—निवेदन किया।

अनुवाद

भक्तगण महाप्रभु का पीछा करते-करते उनके समक्ष आये और उनसे पुरी लौट चलने के लिए अनुनय-विनय की। उन्होंने निवेदन किया कि बंगाल के भक्त पुरुषोत्तम-क्षेत्र में पधार रहे हैं।

सार्वभौम नीलाचले आइला प्रभु लञा ।
प्रभु आइला,—राजा-ठाञि कहिलेन गिया ॥ ६५॥

सार्वभौम नीलाचले आइला प्रभु लञा ।
प्रभु आइला,—राजा-ठाञि कहिलेन गिया ॥ ६५॥

सार्वभौम—सार्वभौम भट्टाचार्य; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी को; **आइला**—आये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **लञा**—लेकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—पहुँचे; **राजा-ठाञि**—राजा को; **कहिलेन**—कहो; **गिया**—जाने के बाद।

अनुवाद

इस तरह सार्वभौम भट्टाचार्य भगवान् चैतन्य को जगन्नाथ पुरी वापस ले आये। तब राजा प्रतापरुद्र के यहाँ जाकर उन्होंने महाप्रभु के आने की उन्हें जानकारी दी।

हेन-काले आइला तथा गोपीनाथाचार्य ।
राजाके आशीर्वाद करि' कहे,—शुन भट्टाचार्य ॥ ६६॥

हेन-काले आइला तथा गोपीनाथाचार्य्य ।
राजाके आशीर्वाद करि' कहे,—शुन भट्टाचार्य्य ॥ ६६॥

हेन-काले—उस समय; **आइला**—आये; **तथा**—वहाँ; **गोपीनाथ-आचार्य्य**—गोपीनाथ आचार्य; **राजाके**—राजा को; **आशीर्वाद करि'**—आशीर्वाद देकर; **कहे**—कहा; **शुन भट्टाचार्य्य**—मेरे प्रिय भट्टाचार्य, कृपया सुनो।

अनुवाद

जब सार्वभौम भट्टाचार्य राजा प्रतापरुद्र के साथ थे, उसी समय

गोपीनाथ आचार्य वहाँ आये। ब्राह्मण होने के नाते उन्होंने राजा को आशीर्वाद दिया और सार्वभौम भट्टाचार्य से इस प्रकार कहा।

গৌড় হৈতে বৈষ্ণব আসিতেছেন দুই-শত ।
মহাপ্রভুর ভক্ত সব—মহা-ভাগবত ॥ ৬৭ ॥

गौड़ हैते वैष्णव आसितेछेन दुइ-शत ।
महाप्रभुर भक्त सब—महा-भागवत ॥ ६७ ॥

गौड़ हैते—बंगाल से; **वैष्णव**—भक्त; **आसितेछेन**—आ रहे हैं; **दुइ-शत**—लगभग दो सौ की संख्या में; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **भक्त**—भक्त; **सब**—सब; **महा-भागवत**—अत्यन्त उन्नत भक्त।

अनुवाद

"लगभग दो सौ भक्त बंगाल से आ रहे हैं। वे सभी महाभागवत हैं और श्री चैतन्य महाप्रभु को विशेष रूप से समर्पित हैं।

নরেন্দ্রে আসিয়া সবে হৈল বিদ্যমান ।
তাঁ-সবারে চাহি বাসা প্রসাদ-সমাধান ॥ ৬৮ ॥

नरेन्द्रे आसिया सबे हैल विद्यमान ।
ताँ-सबारे चाहि वासा प्रसाद-समाधान ॥ ६८ ॥

नरेन्द्रे—नरेन्द्र सरोवर के तट पर; **आसिया**—आकर; **सबे**—वे सब; **हैल विद्यमान**—रूके हैं; **ताँ-सबारे**—उन सबके लिए; **चाहि**—मैं चाहता हूँ; **वासा**—निवासस्थान; **प्रसाद**—प्रसाद बाँटने के लिए; **समाधान**—व्यवस्था।

अनुवाद

"वे सभी नरेन्द्र सरोवर के तट पर आ चुके हैं और वहाँ प्रतीक्षा कर रहे हैं। में चाहता हूँ कि उनके रहने तथा प्रसाद की व्यवस्था हो जाए।"

तात्पर्य

नरेन्द्र नामक एक छोटा सरोवर है, जो आज भी जगन्नाथ पुरी में विद्यमान है, जहाँ चन्दन-यात्रा उत्सव मनाया जाता है। आज तक, जगन्नाथ मन्दिर की मुलाकात के लिए आने वाले सारे बंगाली भक्त पहले इसी सरोवर में स्नान करते हैं। वे मन्दिर में प्रवेश करने के पूर्व वहीं अपने हाथ-पाँव धोते हैं।

রাজা কহে,——পড়িছাকে আমি আজ্ঞা দিব ।
বাসা আদি যে চাহিয়ে,——পড়িছা সব দিব ॥৬৯॥

রাজা কহে,——পড়িছাকে আমি আজ্ঞা দিব ।
বাসা আদি যে চাহিয়ে,——পড়িছা সব দিব ॥৬৯॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **पड़िछाके**—सेवक को; **आमि**—मैं; **आज्ञा दिब**—आज्ञा दूँगा; **वासा**—निवासस्थान; **आदि**—तथा अन्य व्यवस्था; **ये चाहिये**—आपको जो कुछ चाहिए; **पड़िछा**—सेवक; **सब**—सबकुछ; **दिब**—देगा।

अनुवाद

राजा ने उत्तर दिया, "मैं मन्दिर के कर्मचारी को आज्ञा दिये देता हूँ। वह आपकी इच्छानुसार सबके लिए आवास तथा प्रसाद की व्यवस्था कर देगा।

মহাপ্রভুর গণ যত আইল গৌড় হৈতে ।
ভট্টাচার্য, একে একে দেখাহ আমাতে ॥৭০॥

মহাপ্রভুর গণ যত আইল গৌড় হৈতে ।
ভট্টাচার্য, একে একে দেখাহ আমাতে ॥৭০॥

महाप्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **गण**—साथी; **यत**—सब; **आइल**—जो आये हैं; **गौड़ हैते**—बंगाल से; **भट्टाचार्य**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **एके एके**—एक एक करके; **देखाह**—कृपया दिखायें; **आमाते**—मुझे।

अनुवाद

"हे सार्वभौम भट्टाचार्य, कृपया मुझे बंगाल से आने वाले श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों को एक-एक करके दिखलाइये।"

ভট্ট কহে,——অট্টালিকায় কর আরোহণ ।
গোপীনাথ চিনে সবারে, করাবে দরশন ॥৭১॥

ভট্ট কহে,——অট্টালিকায় কর আরোহণ ।
গোপীনাথ চিনে সবারে, করাবে দরশন ॥৭১॥

भट्ट कहे—भट्टाचार्य ने कहा; **अट्टालिकाय**—महल की छत पर; **कर आरोहण**—जरा

ऊपर आओ; **गोपीनाथ**—गोपीनाथ आचार्य; **चिने**—जानता है; **सबारे**—सबको ; **कराबे दरशन**—वह दिखाएगा।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने राजा से अनुरोध किया, "कृपया अपने महल की छत पर चढ़ जाएँ। गोपीनाथ आचार्य हर भक्त को जानते हैं। वे आपको उनकी पहचान करवा देंगे।

आमि काहो नाहि चिनि, चिनिते मन हय ।
गोपीनाथाचार्य सवारे करा'बे परिचय ॥७२॥

आमि काहो नाहि चिनि, चिनिते मन हय ।
गोपीनाथाचार्य्य सबारे करा'बे परिचय ॥७२॥

आमि—मैं; **काहो**—किसी को; **नाहि**—नहीं; **चिनि**—जानता; **चिनिते मन हय**—मैं जानना चाहता हूँ; **गोपीनाथ-आचार्य्य**—गोपीनाथ आचार्य; **सबारे**—उन सबका; **करा'बे परिचय**—परिचय करवाएंगे।

अनुवाद

"वास्तव में मैं उनमें से किसी को नहीं पहचानता, यद्यपि उन्हें जानने की मेरी इच्छा है। चूँकि गोपीनाथ आचार्य उन सबको जानते हैं, अतएव वे उनका नाम आपको बता सकेंगे।"

एत बलि' तिन जन अट्टालिकाय चड़िल ।
हेन-काले वैष्णव सब निकटे आइल ॥७३॥

एत बलि' तिन जन अट्टालिकाय चड़िल ।
हेन-काले वैष्णव सब निकटे आइल ॥७३॥

एत बलि'—यह कहकर; **तिन जन**—तीनों व्यक्ति (राजा, गोपीनाथ आचार्य और सावभौम भट्टाचार्य); **अट्टालिकाय**—महल की छत पर; **चड़िल**—चढ़ गये; **हेन-काले**—इस समय; **वैष्णव**—वैष्णव भक्त; **सब**—सब; **निकटे**—निकट; **आइल**—आये।

अनुवाद

यह कहकर सार्वभौम भट्टाचार्य राजा तथा गोपीनाथ आचार्य के साथ

महल के ऊपर चले गये। उसी समय बंगाल के सारे वैष्णव भक्त महल के निकट आ गये।

দামোদর-স্বরূপ, গোবিন্দ,——দুই জন ।
মালা-প্রসাদ লঞা যায়, যাহাঁ বৈষ্ণব-গণ ॥৭৪॥

दामोदर-स्वरूप, गोविन्द,——दुइ जन ।
माला-प्रसाद लञा य्राय, य्राहाँ वैष्णव-गण ॥७४॥

दामोदर-स्वरूप—स्वरूप दामोदर; **गोविन्द**—गोविन्द; **दुइ जन**—दो व्यक्ति; **माला-प्रसाद**—फूलों की मालाएँ तथा भगवान् जगन्नाथ का प्रसाद; **लञा**—लेकर; **य्राय**—गये; **य्राहाँ**—जहाँ; **वैष्णव-गण**—वैष्णव।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर तथा गोविन्द जगन्नाथजी का प्रसाद तथा फूलों की मालाएँ लेकर उस स्थान पर गये, जहाँ सारे वैष्णव खड़े थे।

প্রথমেতে মহাপ্রভু পাঠাইলা দুঁহারে ।
রাজা কহে, এই দুই কোন্চিনাহ আমারে ॥৭৫॥

प्रथमेते महाप्रभु पाठाइला दुँहारे ।
राजा कहे, एइ दुइ कोन्चिनाह आमारे ॥७५॥

प्रथमेते—पहले; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **पाठाइला**—भेजे; **दुँहारे**—दो व्यक्ति; **राजा कहे**—राजा ने कहा; **एइ दुइ**—ये दोनों; **कोन्**—कौन हैं; **चिनाह**—कृपया परिचय दो; **आमारे**—मुझे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने इन दोनों को पहले ही भेज दिया था। राजा ने पूछा, "ये दोनों कौन हैं? कृपया मुझे इनकी पहचान करायें।"

ভট্টাচার্য কহে,——এই স্বরূপ-দামোদর ।
মহাপ্রভুর হয় ইঁহ দ্বিতীয় কলেবর ॥৭৬॥

भट्टाचार्य्य कहे,——एइ स्वरूप-दामोदर ।
महाप्रभुर हय इँह द्वितीय कलेवर ॥७६॥

भट्टाचार्य्य कहे—भट्टाचार्य ने कहा; **एइ**—यह महाशय; **स्वरूप-दामोदर**—का नाम स्वरूप दामोदर है; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **हय**—हैं; **इँह**—वह; **द्वितीय**—दूसरा; **कलेवर**—शरीर का विस्तार।

अनुवाद

श्री सार्वभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया, "ये स्वरूप दामोदर हैं, जो एक तरह से श्री चैतन्य महाप्रभु के शरीर के द्वितीय विस्तार रूप हैं।

দ্বিতীয়, গোবিন্দ—ভৃত্য, ইহাঁ দোঁহা দিয়া ।
মালা পাঠাঞাছেন প্রভু গৌরব করিয়া ॥৭৭॥

द्वितीय, गोविन्द—भृत्य, इहाँ दोंहा दिया ।
माला पाठाञाछेन प्रभु गौरव करिया ॥ ७७ ॥

द्वितीय—दूसरे; **गोविन्द**—गोविन्द है; **भृत्य**—निजी सेवक; **इहाँ**—यहाँ; **दोंहा दिया**—इन दोनों व्यक्तियों के माध्यम से; **माला**—पुष्प मालाएँ; **पाठाञाछेन**—भिजवाई हैं; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **गौरव करिया**—अति सम्मानपूर्वक।

अनुवाद

"दूसरे व्यक्ति महाप्रभु का निजी सेवक गोविन्द है। महाप्रभु ने बंगाल के भक्तों का सम्मान करने के लिए इन दोनों के हाथों जगन्नाथजी का प्रसाद तथा मालाएँ भेजी हैं।"

আদৌ মালা অদ্বৈতেরে স্বরূপ পরাইল ।
পাছে গোবিন্দ দ্বিতীয় মালা আনি' তাঁরে দিল ॥৭৮॥

आदौ माला अद्वैतेरे स्वरूप पराइल ।
पाछे गोविन्द द्वितीय माला आनि' ताँरे दिल ॥ ७८ ॥

आदौ—प्रारम्भ में; **माला**—एक माला; **अद्वैतेरे**—अद्वैत आचार्य को; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर; **पराइल**—भेंट की; **पाछे**—बाद में; **गोविन्द**—गोविन्द, महाप्रभु के निजी सेवक ने; **द्वितीय**—दूसरी; **माला**—माला; **आनि'**—लाकर; **ताँरे दिल**—उनको दी।

अनुवाद

पहले स्वरूप दामोदर ने आगे बढ़कर अद्वैत आचार्य को माला

पहनायी। इसके बाद गोविन्द ने आकर दूसरी माला अद्वैत आचार्य को पहनायी।

তবে গোবিন্দ দণ্ডবৎকৈল আচার্যেরে ।
তাঁরে নাহি চিনে আচার্য, পুছিল দামোদরে ॥৭৯॥

তবে গোবিন্দ দণ্ডবৎকৈল আচার্য্যেরে ।
তাঁরে নাহি চিনে আচার্য্য, পুছিল দামোদরে ॥৭৯॥

तबे—उस समय; **गोविन्द**—गोविन्द; **दण्डवत्**—नमस्कार करने हेतु भूमि पर गिरकर दण्डवत्; **कैल**—किया; **आचार्य्येरे**—अद्वैत आचार्य को; **ताँरे**—उसको; **नाहि**—नहीं; **चिने**—पहचाना; **आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य ने; **पुछिल**—पूछा; **दामोदरे**—स्वरूप दामोदर को।

अनुवाद

जब गोविन्द ने भूमि पर गिरकर अद्वैत आचार्य को दण्डवत् प्रणाम किया, तो अद्वैत आचार्य ने स्वरूप दामोदर से उसकी पहचान के बारे में पूछताछ की, क्योंकि वे तब गोविंद को नहीं जानते थे।

দামোদর কহে,—ইহার 'গোবিন্দ' নাম ।
ঈশ্বর-পুরীর সেবক অতি গুণবান্ ॥৮০॥

দামোদর কহে,—ইহার 'গোবিন্দ' নাম ।
ঈশ্বর-পুরীর সেবক অতি গুণবান্ ॥৮০॥

दामोदर कहे—दामोदर ने कहा; **इहार**—इसका; **गोविन्द**—गोविन्द; **नाम**—नाम; **ईश्वर-पुरीर सेवक**—ईश्वर पुरी का सेवक; **अति गुणवान्**—अत्यन्त गुणवान्।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर ने उन्हें बतलाया, "यह गोविन्द ईश्वर पुरी का सेवक था। वह अत्यन्त योग्य है।

প্রভুর সেবা করিতে পুরী আজ্ঞা দিল ।
অতএব প্রভু ইঁহাকে নিকটে রাখিল ॥৮১॥

প্রভুর সেবা করিতে পুরী আজ্ঞা দিল ।
অতএব প্রভু ইঁহাকে নিকটে রাখিল ॥৮১॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **सेवा**—सेवा; **करिते**—करने के लिए; **पुरी**—ईश्वर पुरी ने; **आज्ञा दिल**—आज्ञा दी; **अतएव**—इसलिए; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **इँहाके**—उसको; **निकटे**—अपने निकट; **राखिल**—रखा।

अनुवाद

"ईश्वर पुरी ने गोविन्द को आज्ञा दी कि वह श्री चैतन्य महाप्रभु की सेवा करे। अतएव महाप्रभु उसे अपने पास रखते हैं।"

राजा कहे,——याँरे माला दिल दुइ-जन ।
आश्चर्य तेज, बड़ महान्त,——कह कोन्जन? ॥ ८२॥

राजा कहे,——याँरे माला दिल दुइ-जन ।
आश्चर्य्य तेज, बड़ महान्त,——कह कोन्जन? ॥ ८२॥

राजा कहे—राजा ने पूछा; **याँरे**—जिस व्यक्ति को; **माला**—मालाएँ; **दिल**—दीं; **दुइ-जन**—स्वरूप दामोदर और गोविन्द ने; **आश्चर्य्य तेज**—शरीर की आश्चर्यजनक चमक; **बड़ महान्त**—बहुत बड़े भक्त; **कह कोन् जन**—कृपया बताओ वे कौन हैं।

अनुवाद

राजा ने पूछा, "स्वरूप दामोदर तथा गोविन्द ने दोनों मालाएँ किसे पहनाईं? उनके शरीर का तेजइतना अधिक है कि वे अवश्य ही महान् भक्त होंगे। कृपया मुझे बतलायें कि वे कौन हैं?"

आचार्य कहे,——ईँहार नाम अद्वैत आचार्य ।
महाप्रभुर मान्य-पात्र, सर्व-शिरोधार्य ॥ ८३॥

आचार्य्य कहे,——इँहार नाम अद्वैत आचार्य्य ।
महाप्रभुर मान्य-पात्र, सर्व-शिरोधार्य्य ॥ ८३॥

आचार्य्य कहे—गोपीनाथ आचार्य ने कहा; **इँहार नाम**—इनका नाम; **अद्वैत आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मान्य-पात्र**—सम्माननीय; **सर्व-शिरोधार्य्य**—सर्वोच्च भक्त।

अनुवाद

गोपीनाथ आचार्य ने उत्तर दिया, "इनका नाम अद्वैत आचार्य है। इनका आदर श्री चैतन्य महाप्रभु भी करते हैं, अतएव वे सर्वश्रेष्ठ भक्त हैं।

শ্রীবাস-পণ্ডিত ইঁহ, পণ্ডিত-বক্রেশ্বর ।
বিদ্যানিধি-আচার্য, ইঁহ পণ্ডিত-গদাধর ॥ ৮৪ ॥

শ্রীবাস-পণ্ডিত ইঁহ, পণ্ডিত-বক্রেশ্বর ।
বিদ্যানিধি-আচার্য্য, ইঁহ পণ্ডিত-গদাধর ॥ ৮৪ ॥

শ্রীবাস-পণ্ডিত—শ্রীবাস পণ্ডিত; **ইঁহ**—ये; **পণ্ডিত-বক্রেশ্বর**—वक्रेश्वर पण्डित; **বিদ্যানিধি-আচার্য্য**—विद्यानिधि आचार्य; **ইঁহ**—ये; **পণ্ডিত-গদাধর**—गदाधर पण्डित।

अनुवाद

"ये श्रीवास पण्डित, वक्रेश्वर पण्डित, विद्यानिधि आचार्य तथा गदाधर पण्डित हैं।

আচার্যরত্ন ইঁহ, পণ্ডিত-পুরন্দর ।
গঙ্গাদাস পণ্ডিত ইঁহ, পণ্ডিত-শঙ্কর ॥ ৮৫ ॥

আচার্য্যরত্ন ইঁহ, পণ্ডিত-পুরন্দর ।
গঙ্গাদাস পণ্ডিত ইঁহ, পণ্ডিত-শঙ্কর ॥ ৮৫ ॥

আচার্য্যরত্ন—चन्द्रशेखर; **ইঁহ**—यहाँ; **পণ্ডিত-পুরন্দর**—पुरन्दर पण्डित; **গঙ্গাদাস পণ্ডিত**—गंगाधर पण्डित; **ইঁহ**—यहाँ; **পণ্ডিত-শঙ্কর**—शंकर पण्डित।

अनुवाद

"ये रहे आचार्यरत्न, पुरन्दर पण्डित, गंगादास पंडित तथा शंकर पंडित।

এই মুরারি গুপ্ত, ইঁহ পণ্ডিত নারায়ণ ।
হরিদাস ঠাকুর ইঁহ ভুবন-পাবন ॥ ৮৬ ॥

এই মুরারি গুপ্ত, ইঁহ পণ্ডিত নারায়ণ ।
হরিদাস ঠাকুর ইঁহ ভুবন-পাবন ॥ ৮৬ ॥

এই—ये; **মুরারি গুপ্ত**—मुरारी गुप्त; **ইঁহ**—यहाँ; **পণ্ডিত নারায়ণ**—नारायण पण्डित; **হরিদাস ঠাকুর**—हरिदास ठाकुर; **ইঁহ**—यहाँ; **ভুবন-পাবন**—सारे ब्रह्माण्ड के उद्धारक।

अनुवाद

"ये हैं मुरारि गुप्त, पण्डित नारायण तथा सारे ब्रह्माण्ड के उद्धारक हरिदास ठाकुर।

এই হরি-ভট্ট, এই শ্রী-নৃসিংহানন্দ ।
এই বাসুদেব দত্ত, এই শিবানন্দ ॥৮৭॥

এই হরি-ভট্ট, এই শ্রী-নৃসিংহানন্দ ।
এই বাসুদেব দত্ত, এই শিবানন্দ ॥৮৭॥

এই—ये; **হরি-ভট্ট**—हरि भट्ट; **এই**—ये; **শ্রী-নৃসিংহানন্দ**—श्री नृसिंहानन्द; **এই**—ये; **বাসুদেব দত্ত**—वासुदेव दत्त; **এই**—ये; **শিবানন্দ**—शिवानन्द।

अनुवाद

"ये रहे हरि भट्ट और वे हैं नृसिंहानन्द। ये वासुदेव दत्त तथा शिवानन्द सेन हैं।

গোবিন্দ, মাধব ঘোষ, এই বাসু-ঘোষ ।
তিন ভাইর কীর্তনে প্রভু পায়েন সন্তোষ ॥৮৮॥

গোবিন্দ, মাধব ঘোষ, এই বাসু-ঘোষ ।
তিন ভাইর কীর্তনে প্রভু পায়েন সন্তোষ ॥৮৮॥

গোবিন্দ—गोविन्द घोष; **মাধব ঘোষ**—माधव घोष; **এই**—ये; **বাসু-ঘোষ**—वासुदेव घोष; **তিন ভাইর**—तीन भाइयों के; **কীর্তনে**—कीर्तन में; **প্রভু**—महाप्रभु; **পায়েন সন্তোষ**—बहुत आनन्द पाते हैं।

अनुवाद

"और ये हैं गोविन्द घोष, माधव घोष तथा वासुदेव घोष। ये तीनों भाई हैं और इनका संकीर्तन महाप्रभु को बहुत अच्छा लगता है।

तात्पर्य

गोविन्द घोष उत्तर राढ़ीय क्षेत्र के कायस्थ वंश के थे और वे घोष ठाकुर के नाम से प्रसिद्ध थे। आज भी कटवा के निकट अग्रद्वीप नामक स्थान है, जहाँ घोष ठाकुर के नाम से मेला लगता है। वासुदेव घोष ने श्री चैतन्य महाप्रभु विषयक अनेक सुन्दर गीतों की रचना की और ये गीत नरोत्तम दास ठाकुर, भक्तिविनोद ठाकुर, लोचनदास ठाकुर, गोविंद दास ठाकुर तथा अन्य वैष्णवों के गीतों के ही समान प्रामाणिक वैष्णव गीत हैं।

राघव पण्डित, ईँह आचार्य नन्दन ।
श्रीमान्पण्डित एइ, श्रीकान्त, नारायण ॥८९॥

राघव पण्डित, इँह आचार्य नन्दन ।
श्रीमान्पण्डित एइ, श्रीकान्त, नारायण ॥८९॥

राघव पण्डित—राघव पण्डित; **इँह**—यहाँ; **आचार्य नन्दन**—आचार्य नन्दन; **श्रीमान् पण्डित**—श्रीमान् पण्डित; **एइ**—ये; **श्रीकान्त**—श्रीकान्त; **नारायण**—और नारायण।

अनुवाद

"ये हैं राघव पण्डित, ये रहे आचार्यनन्दन, वे श्रीमान पण्डित हैं तथा ये हैं श्रीकान्त तथा नारायण।"

तात्पर्य

नरोत्तम दास ठाकुर ने श्री चैतन्य महाप्रभु के निजी संगियों के सम्मान में निम्न प्रकार से गीत लिखा है (प्रार्थना १३) :

गौराङ्गेर सङ्गिगणे, नित्यसिद्ध करि 'माने
से याय व्रजेन्द्रसुत-पाश

बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे निजी संगी तथा भक्त नित्यमुक्त हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि वे इस भौतिक जगत् के नहीं होते, क्योंकि वे भगवान् की सेवा में निरन्तर लगे रहते हैं। जो भगवान् की सेवा में चौबीसों घण्टे लगा रहता है और भगवान् को कभी नहीं भूलता, वह *नित्यसिद्ध* कहलाता है। इस कथन की पुष्टि श्रील रूप गोस्वामी ने भी की है :

ईहा यस्य हरेर्दास्ये कर्मणा मनसा गिरा।
निखिलास्वप्यवस्थासु जीवन्मुक्तः स उच्यते।

"शरीर, मन, बुद्धि तथा वाणी से कृष्ण की सेवा में लगा हुआ व्यक्ति इस जगत् में नाना प्रकार के तथाकथित भौतिक कार्य करते हुए भी मुक्त पुरुष कहलाता है।" (*भक्तिरसामृतसिन्धु* १.२.१८७)

भक्त सदैव यही सोचता रहता है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा किस तरह अच्छी से अच्छी तरह की जाए और किस तरह उनके नाम, यश तथा लीलाओं का विश्वभर में प्रसार किया जाए। जो *नित्यसिद्ध* है, उसके पास अपनी क्षमता के अनुसार भगवान् के यश का सारे संसार में प्रसार करने के

अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं होता। ऐसे लोग पहले से श्री चैतन्य महाप्रभु के संगी होते हैं। इसीलिए नरोत्तम दास कहते हैं, *नित्यसिद्ध करि माने।* किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि चूँकि श्री चैतन्य महाप्रभु ५०० वर्ष पूर्व स्वयं विद्यमान थे, अतएव केवल उन्हीं के संगी मुक्त थे। बल्कि नरोत्तम दास ठाकुर तो कहते हैं कि जो कोई भी भगवान् के नाम की महिमा का प्रसार करके श्री चैतन्य महाप्रभु की ओर से कार्य करता है, वह नित्यसिद्ध है। जो लोग भगवान् की महिमा का प्रचार करते हैं, ऐसे भक्तों का हमें *नित्यसिद्ध* के रूप में सम्मान करना चाहिए और उन्हें बद्ध नहीं समझना चाहिए।

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥

(*भगवद्गीता* १४.२६)

जो व्यक्ति प्रकृति के भौतिक गुणों को पार कर जाता है, वह ब्रह्म-पद पर अवस्थित माना जाता है। नित्यसिद्धों का भी वही पद है। नित्यसिद्ध न केवल ब्रह्म-पद पर रहता है, अपितु उस पद पर कार्य भी करता है। यदि कोई श्री चैतन्य महाप्रभु के संगियों को नित्यसिद्ध स्वीकार कर ले, तो भी वह आसानी से भगवद्धाम वापस जा सकता है।

शुक्लाम्बर देख, एई श्रीधर, विजय ।
वल्लभ-सेन, एई पुरुषोत्तम, सञ्जय ॥९०॥

शुक्लाम्बर देख, एइ श्रीधर, विजय ।
वल्लभ-सेन, एइ पुरुषोत्तम, सञ्जय ॥९०॥

शुक्लाम्बर—शुक्लाम्बर; **देख**—देखो; **एइ**—ये; **श्रीधर**—श्रीधर; **विजय**—विजय; **वल्लभ-सेन**—वल्लभ सेन; **एइ**—ये; **पुरुषोत्तम**—पुरुषोत्तम; **सञ्जय**—संजय।

अनुवाद

गोपीनाथ आचार्य भक्तों की ओर संकेत करते रहे, "ये शुक्लाम्बर हैं। वे रहे श्रीधर। ये विजय हैं और ये हैं वल्लभ सेन। ये रहे पुरुषोत्तम और वे हैं संजय।

কুলীন-গ্রাম-বাসী এই সত্যরাজ-খান ।
রামানন্দ-আদি সবে দেখ বিদ্যমান ॥৯১॥

কুলীন-গ্রাম-বাসী এই সত্যরাজ-খান ।
রামানন্দ-আদি সবে দেখ বিদ্যমান ॥৯১॥

কুলীন-গ্রাম-বাসী—কুলীন গ্রাম के निवासी; **এই**—ये; **সত্যরাজ-খান**—सत्यराज खान; **রামানন্দ-আদি**—रामानन्द आदि; **সবে**—सब; **দেখ**—देखो; **বিদ্যমান**—उपस्थित।

अनुवाद

"और ये सत्यराज तथा रामानन्द जैसे सभी कुलीन ग्राम के निवासी हैं। वे सभी यहाँ उपस्थित हैं। कृपा करके देखें।

মুকুন্দ-দাস, নরহরি, শ্রী-রঘুনন্দন ।
খণ্ড-বাসী চিরঞ্জীব, আর সুলোচন ॥৯২॥

মুকুন্দ-দাস, নরহরি, শ্রী-রঘুনন্দন ।
খণ্ড-বাসী চিরঞ্জীব, আর সুলোচন ॥৯২॥

মুকুন্দ-দাস—मुकुन्द दास; **নরহরি**—नरहरि; **শ্রী-রঘুনন্দন**—श्री रघुनन्दन; **খণ্ড-বাসী**—खण्ड के निवासी; **চিরঞ্জীব**—चिरंजीव; **আর**—और; **সুলোচন**—सुलोचन।

अनुवाद

"ये रहे मुकुन्द दास, नरहरि, श्री रघुनन्दन, चिरंजीव तथा सुलोचन—ये सभी खण्ड के निवासी हैं।

কতেক কহিব, এই দেখ যত জন ।
চৈতন্যের গণ, সব—চৈতন্য-জীবন ॥৯৩॥

কতেক কহিব, এই দেখ যত জন ।
চৈতন্যের গণ, সব—চৈতন্য-জীবন ॥৯৩॥

কতেক কহিব—मैं कितने नाम बताऊँ; **এই**—ये; **দেখ**—देखो; **যত জন**—सभी व्यक्ति; **চৈতন্যের গণ**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथी; **সব**—इन सबको; **চৈতন্য-জীবন**—श्री चैतन्य महाप्रभु के जीवन और आत्मा समझो।

अनुवाद

"मैं आपको कितने नाम गिनाऊँ? आप यहाँ जितने सारे भक्त देख

रहे हैं, वे सब श्री चैतन्य महाप्रभु के संगी हैं, और महाप्रभु ही उनके प्राण हैं।"

রাজা কহে—দেখি' মোর হৈল চমৎকার ।
বৈষ্ণবের ঐছে তেজ দেখি নাহি আর ॥৯৪॥

राजा कहे—देखि' मोर हैल चमत्कार ।
वैष्णवेर ऐछे तेज देखि नाहि आर ॥ ९४॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **देखि'**—देखने के बाद; **मोर**—मेरा; **हैल**—है; **चमत्कार**—आश्चर्य; **वैष्णवेर**—प्रभु के भक्तों का; **ऐछे**—ऐसा; **तेज**—तेज; **देखि**—मैं देखता हूँ; **नाहि**—नहीं; **आर**—अन्य कोई और।

अनुवाद

राजा ने कहा, "इन सब भक्तों को देखकर मैं अत्यधिक चकित हूँ, क्योंकि इसके पूर्व मैंने किसी में इतना तेज कभी नहीं देखा।

কোটি-সূর্য-সম সব—উজ্জ্বল-বরণ ।
কভু নাহি শুনি এই মধুর কীর্তন ॥৯৫॥

कोटि-सूर्य-सम सब—उज्ज्वल-वरण ।
कभु नाहि शुनि एइ मधुर कीर्तन ॥ ९५॥

कोटि-सूर्य-सम—लाखों सूर्यों की चमक के समान; **सब**—वे सब; **उज्ज्वल-वरण**—अत्यन्त चमकदार; **कभु नाहि शुनि**—कभी नहीं सुनी; **एइ**—यह; **मधुर कीर्तन**—ऐसा मधुर कीर्तन।

अनुवाद

"सचमुच, उनका तेज करोड़ सूर्यों के तेज के समान है। न ही मैंने इसके पूर्व कभी भगवन्नाम का इतना मधुर कीर्तन होते सुना है।

तात्पर्य

जब शुद्ध भक्त कीर्तन करते हैं, तो उनके ऐसे ही लक्षण होते हैं। सारे शुद्ध भक्त सूर्य-प्रकाश के समान चमकीले लगते हैं और उनकी शारीरिक कान्ति अत्यन्त तेजवान होती है। साथ ही उनका संकीर्तन अद्वितीय होता है। ऐसे अनेक पेशेवर कीर्तनिये हैं, जो अनेक वाद्य-यन्त्रों की सहायता से कलात्मक

तथा संगीतात्मक ढंग से संकीर्तन कर सकते हैं, किन्तु उनका कीर्तन शुद्ध भक्तों के आकर्षक संकीर्तन की बराबरी नहीं कर सकता। जो कोई भक्त वैष्णव आचरण के नियमों का दृढ़ता से पालन करता है, तो उसकी शारीरिक कान्ति स्वाभाविक रूप से आकर्षक होगी और उसके द्वारा भगवान् के पवित्र नाम का गायन तथा कीर्तन प्रभावशाली होगा। लोग ऐसे कीर्तन की नि:संकोच भाव से प्रशंसा करेंगे। यहाँ तक कि कि भगवान् चैतन्य या श्रीकृष्ण की लीलाओं से सम्बन्धित नाटक में अभिनय भी भक्तों के द्वारा ही किया जाना चाहिए। ऐसे नाटकों से दर्शकों में रुचि उत्पन्न होगी और वे शक्तिशाली सिद्ध होंगे। अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के सदस्यों को ये दो बातें स्मरण में रखनी चाहिए और भगवान् के यश का प्रसार करने में इन सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए।

ऐछे प्रेम, ऐछे नृत्य, ऐछे हरि-ध्वनि ।
काहाँ नाहि देखि, ऐछे काहाँ नाहि शुनि ॥९६॥

ऐछे प्रेम, ऐछे नृत्य, ऐछे हरि-ध्वनि ।
काहाँ नाहि देखि, ऐछे काहाँ नाहि शुनि ॥ ९६ ॥

ऐछे—ऐसा; **प्रेम**—प्रेम; **ऐछे नृत्य**—ऐसा नृत्य; **ऐछे हरि-ध्वनि**—ऐसी कीर्तन की ध्वनि; **काहाँ**—कहीं भी; **नाहि देखि**—मैंने नहीं देखी; **ऐछे**—ऐसी; **काहाँ**—कहीं; **नाहि शुनि**—मैंने कभी सुनी।

अनुवाद

"मैंने न तो कभी ऐसा प्रेमभाव देखा है, न भगवान् के नाम का इस तरह कीर्तन होते सुना है, न ही संकीर्तन के समय इस प्रकार का नृत्य होते देखा है।"

तात्पर्य

चूँकि जगन्नाथ पुरी में भगवान् जगन्नाथ का मन्दिर स्थित है, इसलिए संसार के सभी भागों से अनेक भक्त भगवान् की महिमा प्रकट करने के लिए संकीर्तन करने वहाँ आते थे। महाराज प्रतापरुद्र ने इन भक्तों को देखा और सुना तो था, किन्तु यहाँ पर वे स्वीकार करते हैं कि महाप्रभु के पार्षदों द्वारा किया

जाने वाला कीर्तन अद्वितीय था। इसके पूर्व उन्होंने न तो ऐसा संकीर्तन कभी सुना था, न ही भक्तों के इतने आकर्षक स्वरूप कभी देखे थे। अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के सदस्यों को चाहिए कि वे मायापुर में श्री चैतन्य महाप्रभु के जन्मदिवस के अवसर पर भारत जाएँ और संकीर्तन करें। इससे भारत के प्रमुख व्यक्तियों का ध्यान उसी तरह आकृष्ट होगा, जिस प्रकार कि श्री चैतन्य महाप्रभु के संगियों के सौन्दर्य, शारीरिक तेज तथा संकीर्तन शैली से महाराज प्रतापरुद्र का ध्यान आकृष्ट हुआ था। जब श्री चैतन्य महाप्रभु इस ग्रह पर विद्यमान थे, तब उनके संगियों की संख्या अनगिनत थी, किन्तु जो भी शुद्ध जीवन बिताता है और श्री चैतन्य महाप्रभु के मिशन में निष्ठा रखता है, उसे महाप्रभु का नित्यसिद्ध संगी समझना चाहिए।

ভট্টাচার্য কহে এই মধুর বচন ।
চৈতন্যের সৃষ্টি—এই প্রেম-সঙ্কীর্তন ॥৯৭॥

भट्टाचार्य कहे एइ मधुर वचन ।
चैतन्येर सृष्टि—एइ प्रेम-सङ्कीर्तन ॥९७॥

भट्टाचार्य—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **कहे**—उत्तर दिया; **एइ**—यह; **मधुर वचन**—मधुर वाणी; **चैतन्येर सृष्टि**—श्री चैतन्य महाप्रभु की सृष्टि; **एइ**—यह; **प्रेम-सङ्कीर्तन**—प्रेम संकीर्तन।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "यह मधुर दिव्य ध्वनि महाप्रभु की विशेष सृष्टि है, जो प्रेम-संकीर्तन कहलाती है।"

অবতরি' চৈতন্য কৈল ধর্ম-প্রচারণ ।
কলি-কালে ধর্ম—কৃষ্ণ-নাম-সঙ্কীর্তন ॥৯৮॥

अवतरि' चैतन्य कैल धर्म-प्रचारण ।
कलि-काले धर्म—कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन ॥९८॥

अवतरि'—अवतरित होकर; **चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैल**—किया; **धर्म-प्रचारण**—धर्म का प्रचार; **कलि-काले**—इस कलियुग में; **धर्म**—धार्मिक सिद्धान्त; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम का; **सङ्कीर्तन**—संकीर्तन।

अनुवाद

"इस कलियुग में श्री चैतन्य महाप्रभु कृष्णभावनामृत धर्म का प्रचार करने के लिए अवतरित हुए हैं। अतएव भगवान् कृष्ण के पवित्र नामों का कीर्तन वही इस युग का धर्म है।

सङ्कीर्तन-यज्ञे ताँरे करे आराधन ।
सेइ त' सुमेधा, आर—कलि-हत-जन ॥९९॥

सङ्कीर्तन-यज्ञे ताँरे करे आराधन ।
सेइ त' सुमेधा, आर—कलि-हत-जन ॥ ९९ ॥

सङ्कीर्तन-यज्ञे—संकीर्तन में; **ताँरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **करे**—करता है; **आराधन**—आराधना; **सेइ त'**—ऐसा व्यक्ति; **सु-मेधा**—अत्यन्त बुद्धिमान; **आर**—बाकी; **कलि-हत-जन**—इस कलियुग के शिकार।

अनुवाद

"जो भी व्यक्ति संकीर्तन द्वारा श्री चैतन्य महाप्रभु की सेवा करता है, उसे अत्यन्त बुद्धिमान समझा जाना चाहिए। जो ऐसा नहीं करता, उसे इस युग का शिकार तथा बुद्धि से रहित समझा जाना चाहिए।

तात्पर्य

धूर्त लोग कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति अपनी निजी धार्मिक विधि गढ़ सकता है। इस विचारधारा की यहाँ पर भर्त्सना की गई है। यदि कोई सचमुच धार्मिक बनना चाहता है, तो उसे हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन अपनाना चाहिए। *श्रीमद्भागवत* (६.३.१९-२२) में धर्म का असली अर्थ बतलाया गया है :

धर्मं तु साक्षाद्भगवत्प्रणीतं
न वै विदुर्ऋषयो नापि देवाः ।
न सिद्धमुख्या असुरा मनुष्याः
कुतश्च विद्याधरचारणादयः ॥
स्वयंम्भूर्नारदः शम्भुः कुमारः कपिलो मनुः ।
प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासकिर्वयम् ॥

द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः ।
गुह्यं विशुद्धं दुर्बोधं यं ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥
एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां धर्मः परः स्मृतः ।
भक्तियोगो भगवति तन्नामग्रहणादिभिः ॥

इन श्लोकों का तात्पर्य यही है कि मनुष्य के द्वारा धर्म गढ़ा नहीं जा सकता। धर्म तो भगवान् की आचार संहिता है। फलस्वरूप बड़े से बड़े सन्त, देवता या सिद्ध-मुख्य भी धर्म को नहीं गढ़ सकते। तो फिर असुरों, मनुष्यों, विद्याधरों, चारणों आदि की तो बात ही क्या? धर्म के सिद्धान्त परम्परा-पद्धति से अवतरित होते हैं, जिनका शुभारम्भ बारह महापुरुषों से होता है। ये हैं—ब्रह्माजी, महर्षि नारद, शिवजी, चारों कुमार, देवहूति-पुत्र कपिल, स्वायंभुव मनु, प्रह्लाद महाराज, राजा जनक, भीष्म पितामह, बलि महाराज, शुकदेव गोस्वामी तथा यमराज। धर्म के सिद्धान्त इन्हीं बारह पुरुषों को ज्ञात है। धर्म उन धार्मिक सिद्धान्तों का सूचक है, जिनके द्वारा मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को समझ सकता है। धर्म अत्यन्त गोपनीय, भौतिक प्रभाव से अकलुषित तथा सामान्य व्यक्तियों को समझने के लिए अत्यन्त कठिन होता है। किन्तु यदि कोई वास्तव में धर्म को समझ लेता है, तो वह तुरन्त मुक्त हो जाता है और भगवद्धाम चला जाता है। *भागवत धर्म* अर्थात् परम्परा पद्धति द्वारा विवेचित धर्म परम धर्म है। दूसरे शब्दों में, धर्म भक्तियोग के विज्ञान को बताने वाला है, जिसका शुभारम्भ नवदीक्षित भक्त द्वारा भगवान् के पवित्र नाम का उच्चारण करने के साथ होता है। (*तन्नामग्रहणादिभिः*)

अतः इस कलियुग के लिए *चैतन्य-चरितामृत* (श्लोक ९८) में संस्तुति की गई है, *कलिकाले धर्म—कृष्णनाम-सङ्कीर्तन।* कलियुग में भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन को धर्म की विधि के रूप में सारे वैदिक शास्त्रों ने स्वीकार किया है। इस *चैतन्य चरितामृत* के अगले श्लोक में, जो कि *श्रीमद्भागवत* (११.५.३२) से ही है, इसकी और पुष्टि की गई है।

কৃষ্ণ-বর্ণং ত্বিষাকৃষ্ণং সাঙ্গোপাঙ্গাস্ত্র-পার্ষদম্ ।
যজ্ঞৈঃ সঙ্কীর্তন-প্রায়ৈর্যজন্তি হি সু-মেধসঃ ॥১০০॥

कृष्ण-वर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्र-पार्षदम् ।
यज्ञैः सङ्कीर्तन-प्रायैर्यजन्ति हि सु-मेधसः ॥ १०० ॥

कृष्ण-वर्णम्—कृष्ण शब्द को दोहराना; **त्विषा**—वर्ण सहित; **अकृष्णम्**—काला नहीं (सुनहरा); **स-अङ्ग**—साथियों सहित; **उपाङ्ग**—सेवक; **अस्त्र**—अस्त्र; **पार्षदम्**—पार्षद; **यज्ञैः**—यज्ञ से; **सङ्कीर्तन-प्रायैः**—प्रायः सामूहिक कीर्तन; **यजन्ति**—वे पूजा करते हैं; **हि**—अवश्य; **सु-मेधसः**—बुद्धिमान व्यक्ति।

अनुवाद

"'इस कलियुग में बुद्धिमान लोग भगवान् के उन अवतार की, जो निरन्तर कृष्ण-नाम का गायन करते हैं, पूजा करने के लिए संकीर्तन करते हैं। यद्यपि उनका रंग साँवला नहीं है, तो भी वे साक्षात् कृष्ण हैं। वे अपने संगियों, सेवकों, अस्त्रों तथा पार्षदों से युक्त रहते हैं।'"

तात्पर्य

इस श्लोक की व्याख्या के लिए देखें आदिलीला, अध्याय ३, श्लोक ५२।

राजा कहे,—शास्त्र-प्रमाणे चैतन्य हन कृष्ण ।
तबे केने पण्डित सब ताँहाते वितृष्ण? ॥ १०१ ॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **शास्त्र-प्रमाणे**—शास्त्रों के प्रमाण से; **चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हन**—हैं; **कृष्ण**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण; **तबे**—अतः; **केने**—क्यों; **पण्डित**—तथाकथित विद्वान; **सब**—सब; **ताँहाते**—उनके प्रति; **वितृष्ण**—उदासीन।

अनुवाद

राजा ने कहा, "शास्त्रों के प्रमाण के अनुसार यह निष्कर्ष निकलता है कि श्री चैतन्य महाप्रभु ही स्वयं भगवान् कृष्ण हैं। तो फिर पण्डितजन कभी-कभी उनके प्रति उदासीन क्यों रहते हैं?"

भट्ट कहे,—ताँर कृपा-लेश हय याँरे ।
सेइ से ताँहारे 'कृष्ण' करि' लइते पारे ॥ १०२ ॥

भट्ट कहे,—ताँर कृपा-लेश हय ग्राँरे ।
सेइ से ताँहारे 'कृष्ण' करि' लइते पारे ॥ १०२ ॥

भट्ट कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **ताँर कृपा**—महाप्रभु चैतन्य की कृपा; **लेश**—लेश मात्र भी; **हय**—हो; **ग्राँरे**—जिस पर; **सेइ से**—वही व्यक्ति केवल; **ताँहारे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कृष्ण करि'**—कृष्ण स्वीकार करके; **लइते पारे**—समझ सकता है।

अनुवाद

भट्टाचार्य ने उत्तर दिया, "जिसे श्री चैतन्य महाप्रभु की रंचमात्र भी कृपा प्राप्त हुई है, वही व्यक्ति समझ पाता है कि वे कृष्ण हैं, अन्य कोई नहीं।

तात्पर्य

जिस पर भगवान् कृष्ण की विशेष कृपा होती है, वही व्यक्ति संकीर्तन आन्दोलन का प्रसार कर सकता है (*कृष्णशक्ति विना नहे तार प्रवर्तन*)। सर्वप्रथम भगवान् की कृपा प्राप्त किये बिना कोई भी व्यक्ति भगवान् के पवित्र नाम का प्रचार नहीं कर सकता। जो भगवन्नाम का प्रचार कर सके, उसे भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के शब्दों में *लब्ध-चैतन्य* कहा जाता है। लब्ध-चैतन्य वह है, जिसने अपनी मूल चेतना—कृष्णभावना—को जाग्रत कर लिया है। कृष्णभावनामृत में शुद्ध भक्त का इतना प्रभाव पड़ता है कि वह अन्यों को कृष्णभावनाभावित होने के लिए जाग्रत कर सकता है, जिससे वे स्वयं को कृष्ण की प्रेमाभक्ति में लगा सकते हैं। इस प्रकार शुद्ध भक्तों की वंशावली बढ़ती जाती है और अपने भक्तों की संख्या इस प्रकार बढ़ती देखकर चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। *सुमेधसः* शब्द का अर्थ है "कुशाग्र बुद्धि वाले।" ऐसे कुशाग्र बुद्धि के लोग सामान्य लोगों में चैतन्य महाप्रभु से प्रेम करने की रुचि उत्पन्न कर सकते हैं और उनके माध्यम से राधा-कृष्ण से प्रेम करने में रुचि उत्पन्न करा सकते हैं। जो लोग श्री चैतन्य महाप्रभु को समझने में रुचि नहीं रखते, वे अपनी कलात्मकता के बावजूद अपने पेशेवर कीर्तन तथा धन-प्राप्ति के हेतु नृत्य करने से निरे भौतिक बन जाते हैं। जिस व्यक्ति की श्री चैतन्य महाप्रभु में पूर्ण श्रद्धा नहीं होती, वह संकीर्तन आन्दोलन में ठीक से नाच-गा नहीं सकता। कृत्रिम गायन तथा नृत्य भावुकता के कारण हो सकता है, किन्तु इससे कृष्णभावनामृत में प्रगति करने में सहायता नहीं मिलती।

তাঁর কৃপা নহে যারে, পণ্ডিত নহে কেনে ।
দেখিলে শুনিলেহ তাঁরে 'ঈশ্বর' না মানে ॥ ১০৩ ॥

তাঁর কৃপা নহে যারে, পণ্ডিত নহে কেনে ।
দেখিলে শুনিলেহ তাঁরে 'ঈশ্বর' না মানে ॥ ১০৩ ॥

তাঁর কৃপা—उनकी कृपा; **নহে**—नहीं हो; **যারে**—जिस पर; **পণ্ডিত**—विद्वान; **নহে**—यद्यपि; **কেনে**—तथापि; **দেখিলে**—देखने पर भी; **শুনিলেহ**—सुनने से भी; **তাঁরে**—उनको; **ঈশ্বর**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **না মানে**—नहीं मानता।

अनुवाद

"जब तक किसी व्यक्ति पर श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा नहीं होती, तब तक कोई कितना ही बड़ा पण्डित क्यों न हो और वह कितना ही क्यों न देखे या सुने, वह महाप्रभु को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में नहीं स्वीकार कर सकता।

तात्पर्य

यही सिद्धान्त उन असुरों पर लागू किया जा सकता है, चाहे वे श्री चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय के ही क्यों न हों। महाप्रभु से विशेष शक्ति प्राप्त किये बिना कोई व्यक्ति उनके यश का प्रचार विश्वभर में नहीं कर सकता। कोई अपने आपको श्री चैतन्य महाप्रभु का कितना ही विद्वान अनुयायी क्यों न मानता हो और भले ही वह सारे विश्व में महाप्रभु के नाम का प्रचार क्यों न करता हो, किन्तु यदि उस पर श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा नहीं है, तो वह शुद्ध भक्तों में दोष निकालेगा और यह नहीं समझ सकेगा कि प्रचारक को महाप्रभु से किस तरह शक्ति प्राप्त होती है। जो व्यक्ति इस समय सारे विश्व में फैलने वाले कृष्णभावनामृत आन्दोलन की आलोचना करता है या इस आन्दोलन में या इस आन्दोलन के मुखिया में दोष निकालता है, उसे श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा से वंचित समझना चाहिए।

অথাপি তে দেব পদাম্বুজ-দ্বয়-
প্রসাদ-লেশানুগৃহীত এব হি ।
জানাতি তত্ত্বং ভগবন্মহিম্নো
ন চান্য একোঽপি চিরং বিচিন্বন্ ॥ ১০৪ ॥

अथापि ते देव पदाम्बुज-द्वय-
प्रसाद-लेशानुगृहीत एव हि ।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो
न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् ॥ १०४॥

अथ—अतः; **अपि**—निस्सन्देह; **ते**—आपके; **देव**—मेरे देव; **पद-अम्बुज-द्वय**—दोनों चरणकमल; **प्रसाद**—कृपा के; **लेश**—लेश मात्र से; **अनुगृहीतः**—अनुगृहीत; **एव**—अवश्य; **हि**—निस्सन्देह; **जानाति**—जानता है; **तत्त्वम्**—तत्त्व, सत्य; **भगवत्**—भगवान् के; **महिम्नः**—महिमा की; **न**—नहीं; **च**—और; **अन्यः**—दूसरा; **एकः**—एक; **अपि**—यद्यपि; **चिरम्**—चिरकाल के लिए; **विचिन्वन्**—अनुमान लगाते हैं।

अनुवाद

"(ब्रह्माजी ने कहा) 'हे प्रभु, यदि किसी को आपके चरणकमलों की रंचमात्र भी कृपा प्राप्त हो जाती है, तो वह आपकी महानता को समझ सकता है। किन्तु जो लोग पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को समझने के लिए तर्कवितर्क करते हैं, वे अनेक वर्षों तक वेदों का अध्ययन करते रहने पर भी आपको नहीं जान पाते।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.२९) से लिया गया है। इसकी व्याख्या मध्यलीला अध्याय ६, श्लोक ८४ में की जा चुकी है।

राजा कहे,—सबे जगन्नाथ ना देखिया ।
चैतन्येर वासा-गृहे चलिला धाञा ॥ १०५॥

राजा कहे,—सबे जगन्नाथ ना देखिया ।
चैतन्येर वासा-गृहे चलिला धाञा ॥ १०५॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **सबे**—वे सब; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ के; **ना देखिया**—दर्शन के बिना; **चैतन्येर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **वासा-गृहे**—निवासस्थान को; **चलिला**—वे चले गये; **धाञा**—दौड़ते हुए।

अनुवाद

राजा ने कहा, "सारे भक्त भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर जाने के बदले श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान की ओर दौड़े जा रहे हैं।"

ভট্ট কহে,—এই ত' স্বাভাবিক প্রেম-রীত ।
মহাপ্রভু মিলিবারে উৎকণ্ঠিত চিত ॥ ১০৬ ॥

भट्ट कहे,—एइ त' स्वाभाविक प्रेम-रीत ।
महाप्रभु मिलिबारे उत्कण्ठित चित ॥ १०६ ॥

भट्ट कहे—भट्टाचार्य ने उत्तर दिया; **एइ त'**—यह है; **स्वाभाविक**—स्वाभाविक; **प्रेम-रीत**—प्रेम का आकर्षण; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मिलिबारे**—मिलने के लिए; **उत्कण्ठित**—उत्सुक; **चित**—मन।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "यही रागानुग प्रेम है। सारे भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलने के लिए अत्यन्त उत्सुक हैं।

আগে তাঁরে মিলি' সবে তাঁরে সঙ্গে লঞা ।
তাঁর সঙ্গে জগন্নাথ দেখিবেন গিয়া ॥ ১০৭ ॥

आगे ताँरे मिलि' सबे ताँरे सङ्गे लञा ।
ताँर सङ्गे जगन्नाथ देखिबेन गिया ॥ १०७ ॥

आगे—पहले; **ताँरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **मिलि'**—मिलकर; **सबे**—सभी भक्त; **ताँरे**—उनको; **सङ्गे**—साथ; **लञा**—लेकर; **ताँर सङ्गे**—उनके साथ; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **देखिबेन**—वे दर्शन करेंगे; **गिया**—जाकर।

अनुवाद

"सारे भक्त पहले श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलेंगे और तब उन्हें साथ लेकर वे सब भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करने मन्दिर में जायेंगे।"

রাজা কহে,—ভবানন্দের পুত্র বাণীনাথ ।
প্রসাদ লঞা সঙ্গে চলে পাঁচ-সাত ॥ ১০৮ ॥

राजा कहे,—भवानन्देर पुत्र वाणीनाथ ।
प्रसाद लञा सङ्गे चले पाँच-सात ॥ १०८ ॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **भवानन्देर पुत्र**—भवानन्द का पुत्र; **वाणीनाथ**—वाणीनाथ; **प्रसाद लञा**—महाप्रसाद लेकर; **सङ्गे**—अपने साथ; **चले**—चले; **पाँच-सात**—पाँच अथवा सात व्यक्तियों को।

अनुवाद

राजा ने कहा, "भवानन्द राय का पुत्र वाणीनाथ पाँच-सात अन्य लोगों के साथ जगन्नाथजी का प्रसाद लाने गये हैं।

महाप्रभुर आलये करिल गमन ।
एत महा-प्रसाद चाहि'——कह कि कारण ॥ १०९॥

महाप्रभुर आलये करिल गमन ।
एत महा-प्रसाद चाहि'——कह कि कारण ॥ १०९॥

महाप्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **आलये**—निवासस्थान; **करिल गमन**—वह जा चुका है; **एत**—इतना; **महा-प्रसाद**—महाप्रसाद; **चाहि'**—आवश्यकता होने की; **कह**—कृपा बताओ; **कि कारण**—क्या कारण है।

अनुवाद

वस्तुतः वाणीनाथ पहले ही श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान जा चुका है और पर्याप्त महाप्रसाद ले गया है। कृपा करके मुझे इसका कारण बतलायें।"

भट्ट कहे,——भक्त-गण आइल जानिञा ।
प्रभुर इङ्गिते प्रसाद याय ताँरा लञा ॥ ११०॥

भट्ट कहे,——भक्त-गण आइल जानिञा ।
प्रभुर इङ्गिते प्रसाद याय ताँरा लञा ॥ ११०॥

भट्ट कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **भक्त-गण**—सभी भक्त; **आइल**—आये हैं; **जानिञा**—जानकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **इङ्गिते**—संकेत से; **प्रसाद**—जगन्नाथ का प्रसाद; **याय**—गये; **ताँरा**—वे सब; **लञा**—लेने हेतु।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "यह समझकर कि सारे भक्त आ चुके हैं, महाप्रभु ने संकेत दिया और इतनी मात्रा में महाप्रसाद ले आये हैं।"

राजा कहे,——उपवास, क्षौर——तीर्थेर विधान ।
ताहा ना करिया केने खाइब अन्न-पान ॥ १११॥

राजा कहे,—उपवास, क्षौर—तीर्थेर विधान ।
ताहा ना करिया केने खाइब अन्न-पान ॥ १११ ॥

राजा कहे—राजा ने कहा; **उपवास**—उपवास करना; **क्षौर**—बाल बनाना; **तीर्थेर विधान**—तीर्थ स्थान पर जाने के विधि विधान; **ताहा**—उन्हें; **ना करिया**—पालन करने के बिना; **केने**—क्यों; **खाइब**—वे खायेंगे; **अन्न-पान**—अन्न तथा जलपान।

अनुवाद

तब राजा ने भट्टाचार्य से पूछा, "उन भक्तों ने तीर्थस्थान की मुलाकात लेने के नियमों का—यथा उपवास रखने, बाल बनवाने इत्यादि का पालन क्यों नहीं किया? उन्होंने पहले प्रसाद क्यों ग्रहण किया?"

भट्ट कहे,—तुमि येई कह, सेई विधि-धर्म ।
एई राग-मार्गे आछे सूक्ष्म-धर्म-मर्म ॥ ११२ ॥
भट्ट कहे,—तुमि येइ कह, सेइ विधि-धर्म ।
एइ राग-मार्गे आछे सूक्ष्म-धर्म-मर्म ॥ ११२ ॥

भट्ट कहे—भट्टाचार्य ने कहा; **तुमि येइ कह**—आप जो कहते हैं; **सेइ विधि-धर्म**—वही विधि विधान है; **एइ राग-मार्गे**—इस स्वाभाविक प्रेम में; **आछे**—हैं; **सूक्ष्म-धर्म-मर्म**—धर्म प्रणाली की सूक्ष्म बारीकियाँ।

अनुवाद

भट्टाचार्य ने राजा से कहा, "आपने जो कुछ कहा है, वह तीर्थस्थानों की मुलाकात लेने के नियमानुसार ठीक है, किन्तु एक दूसरा भी मार्ग है, जो स्वतःस्फूर्त रागानुग प्रेम का मार्ग है। इसके अनुसार धार्मिक नियमों के पालन में सूक्ष्म बारीकियाँ सन्निहित हैं।

तात्पर्य

वैदिक नियमों के अनुसार तीर्थयात्रा करने के पूर्व ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना चाहिए। सामान्यतया लोगों को काम-वासना इतनी सताती है कि रात में बिना संभोग के उन्हें नींद ही नहीं आती। इसलिए यह नियम बना हुआ है कि सामान्य व्यक्ति तीर्थयात्रा पर जाने के पूर्व पूर्ण ब्रह्मचर्य रखे। तीर्थस्थान में प्रवेश करते ही वह दिन-भर उपवास रखे और अपना सिर मुँड़ाने के बाद तीर्थस्थान के निकटवर्ती नदी या सागर में स्नान करे। ये कृत्य पापकर्मों के

प्रभावों को निरस्त करने के लिए किये जाते हैं। तीर्थस्थानों की मुलाकात लेने का अर्थ ही है पापमय जीवन के फलों को शमित करना। तीर्थस्थानों में जाने वाले लोग अपने पापों को वहाँ छोड़ते हैं, इसलिए ये तीर्थस्थान यात्रियों के पाप-कृत्यों से बोझिल हो उठते हैं।

किन्तु जब कोई सन्त-महात्मा या शुद्ध भक्त ऐसे तीर्थस्थान में जाता है, तो वह सामान्य लोगों द्वारा छोड़े गये पापकर्मों के फलों को नष्ट करके तीर्थस्थान को फिर से शुद्ध बना देता है। *तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि* (*भागवत* १.१३.१०)। अतएव किसी तीर्थस्थान में सामान्य मनुष्य का जाना और किसी महान् सन्त पुरुष का जाना भिन्न-भिन्न है। सामान्य व्यक्ति तीर्थस्थान में अपने पाप छोड़ जाता है, किन्तु सन्त पुरुष या भक्त अपनी उपस्थिति से इन पापों को धो डालता है। श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्त सामान्य लोग न थे और उन पर तीर्थस्थानों पर जाने वालों के नियमों को लागू नहीं किया जा सकता था। प्रत्युत उनमें श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए स्वत:स्फूर्त रागानुग प्रेम था। तीर्थस्थान में पहुँचते ही वे भगवान् चैतन्य का दर्शन करने गये और तीर्थस्थान के नियमों का पालन न करते हुए, उन्होंने महाप्रभु की आज्ञा के अनुसार महाप्रसाद ग्रहण किया।

ঈশ্বরের পরোক্ষ আজ্ঞা—ক্ষৌর, উপোষণ ।
প্রভুর সাক্ষাতাজ্ঞা—প্রসাদ-ভোজন ॥ ১১৩ ॥

ईश्वरेर परोक्ष आज्ञा—क्षौर, उपोषण ।
प्रभुर साक्षाताज्ञा—प्रसाद-भोजन ॥ ११३ ॥

ईश्वरेर—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की ; **परोक्ष**—अप्रत्यक्ष; **आज्ञा**—आज्ञा; **क्षौर**—बाल कटवाना; **उपोषण**—उपवास करना; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **साक्षात्**—साक्षात्; **आज्ञा**—आज्ञा; **प्रसाद-भोजन**—प्रसाद लेना।

अनुवाद

"सिर मुँड़ाने तथा उपवास रखने के शास्त्रीय आदेश पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की परोक्ष आज्ञा हैं, किन्तु जब महाप्रभु प्रसाद ग्रहण करने की प्रत्यक्ष आज्ञा देते हैं, तो स्वाभाविक है कि भक्तगण उसे ही प्रथम कर्तव्य मानकर प्रसाद ग्रहण करते हैं।

তাহাঁ উপবাস, যাহাঁ নাহি মহা-প্রসাদ ।
প্রভু-আজ্ঞা-প্রসাদ-ত্যাগে হয় অপরাধ ॥ ১১৪ ॥

তাহাঁ উপবাস, য়াহাঁ নাহি মহা-প্রসাদ ।
প্রভু-আজ্ঞা-প্রসাদ-ত্যাগে হয় অপরাধ ॥ ১১৪ ॥

তাহাঁ—वहाँ; **উপবাস**—उपवास; **য়াহাঁ**—जहाँ; **নাহি**—नहीं है; **মহা-প্রসাদ**—महाप्रसाद; **প্রভু-আজ্ঞা**—श्री चैतन्य महाप्रभु की प्रत्यक्ष आज्ञा; **প্রসাদ**—प्रसाद; **ত্যাগে**—त्यागकर; **হয়**—है; **অপরাধ**—अपराध।

अनुवाद

"जहाँ महाप्रसाद उपलब्ध न हो, वहीं उपवास करना चाहिए, किन्तु जहाँ पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् प्रत्यक्ष रूप से प्रसाद ग्रहण करने का आदेश दें, वहाँ ऐसे सुअवसर की उपेक्षा करना अपराध है।

বিশেষে শ্রী-হস্তে প্রভু করে পরিবেশন ।
এত লাভ ছাড়ি' কোন্‌করে উপোষণ ॥ ১১৫ ॥

বিশেষে শ্রী-হস্তে প্রভু করে পরিবেশন ।
এত লাভ ছাড়ি' কোন্‌করে উপোষণ ॥ ১১৫ ॥

বিশেষে—विशेष रूप से; **শ্রী-হস্তে**—अपने दिव्य हाथ से; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **করে**—करते हैं; **পরিবেশন**—वितरण; **এত**—इतना; **লাভ**—लाभ; **ছাড়ি'**—छोड़कर; **কোন্**—कौन; **করে**—करे; **উপোষণ**—उपवास।

अनुवाद

"जब श्री चैतन्य महाप्रभु अपने दिव्य हाथ से प्रसाद बाँट रहे हों, तो भला कौन उस अवसर को हाथ से जाने देगा और उपवास के विधान को स्वीकार करेगा?

পূর্বে প্রভু মোরে প্রসাদ-অন্ন আনি' দিল ।
প্রাতে শয়্যায় বসি' আমি সে অন্ন খাইল ॥ ১১৬ ॥

পূর্বে প্রভু মোরে প্রসাদ-অন্ন আনি' দিল ।
প্রাতে শয়্যায় বসি' আমি সে অন্ন খাইল ॥ ১১৬ ॥

पूर्वे—इससे पहले; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मोरे**—मुझे; **प्रसाद-अन्न**—महाप्रसाद का भात; **आनि'**—लाकर; **दिल**—दिया; **प्राते**—प्रात: काल सवेरे; **शय्याय**—मेरी शय्या पर; **वसि'**—बैठकर; **आमि**—मैंने; **से**—वह; **अन्न**—भात; **खाइल**—खाया।

अनुवाद

"इससे पहले एक दिन प्रात:काल महाप्रभु ने मुझे महाप्रसाद का अन्न दिया था, जिसे मैंने बिना हाथ-मुँह धोये ही बिस्तर पर बैठे-बैठे खाया था।

যাঁরে কৃপা করি' করেন হৃদয়ে প্রেরণ ।
কৃষ্ণাশ্রয় হয়, ছাড়ে বেদ-লোক-ধর্ম ॥ ১১৭॥

य़ाँरे कृपा करि' करेन हृदये प्रेरण ।
कृष्णाश्रय हय, छाड़े वेद-लोक-धर्म ॥ ११७॥

य़ाँरे—जिस किसी पर; **कृपा**—कृपा; **करि'**—करके; **करेन**—देते हैं; **हृदये**—हृदय में; **प्रेरण**—प्रेरणा; **कृष्ण-आश्रय**—भगवान् कृष्ण का आश्रय; **हय**—होता है; **छाड़े**—वह त्याग देता है; **वेद**—वैदिक सिद्धान्त; **लोक-धर्म**—लोक धर्म।

अनुवाद

"महाप्रभु जिस मनुष्य को भीतर से प्रेरित करके उस पर अपनी कृपा दर्शाते हैं, वह केवल भगवान् कृष्ण की शरण ग्रहण करता है और समस्त वैदिक तथा सामाजिक प्रथाओं को त्याग देता है।

तात्पर्य

यह *भगवद्गीता* (१८.६६) में भगवान् कृष्ण का भी उपदेश है :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच: ॥

"सारे धर्मों को त्यागकर मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सारे पापों से छुटकारा दिला दूँगा। तुम डरो मत।" पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् में ऐसी अटल श्रद्धा भगवान् की कृपा से ही हो सकती है। भगवान् हरेक के हृदय में आसीन हैं और जब वे अपने भक्त को स्वयं प्रेरित करते हैं, तब भक्त वैदिक या सामाजिक मान्यताओं की परवाह नहीं करता, प्रत्युत वह भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा

में अपने आपको लगा देता है। इसकी पुष्टि *श्रीमद्भागवत* के निम्नलिखित श्लोक (४.२९.४६) में हुई है।

यदा यमनुगृह्णाति भगवानात्म-भावितः ।
स जहाति मतिं लोके वेदे च परिनिष्ठिताम् ॥११८॥

यदा यमनुगृह्णाति भगवानात्म-भावितः ।
स जहाति मतिं लोके वेदे च परिनिष्ठिताम् ॥११८॥

यदा—जब; **यम्**—जिसको; **अनुगृह्णाति**—विशेष कृपा करते हैं; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **आत्म-भावितः**—जो हर एक के हृदय में विराजमान हैं; **सः**—वह व्यक्ति; **जहाति**—त्याग देता है; **मतिम्**—परवाह करना; **लोके**—लोक व्यवहार का; **वेदे**—वैदिक विधि विधान का; **च**—भी; **परिनिष्ठिताम्**—आसक्त।

अनुवाद

"'जब कोई व्यक्ति अपने हृदय में आसीन भगवान् के द्वारा प्रेरित होता है, तब वह न तो सामाजिक रीतियों की न ही वैदिक विधानों की परवाह करता है।'"

तात्पर्य

यह आदेश (*श्रीमद्भागवत्* ४.२९.४६) नारद मुनि ने पुरंजन की कथा के सन्दर्भ में राजा प्राचीनबर्हि को दिया था। यहाँ नारदजी का अभिप्राय यह है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की कृपा के बिना मनुष्य अपने आपको उन सकाम कर्मों से बाहर नहीं कर सकता, जो वेदों की परिधि में हैं। यहाँ तक कि पिछले श्लोकों में (*श्रीमद्भागवत* ४.२९.४२-४४ में) नारद जी स्वीकार करते हैं कि ब्रह्माजी, शिवजी, मनु, दक्षादि प्रजापतिगण, चारों कुमार, मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ तथा स्वयं नारद को भी सही ढंग से भगवान् की अहैतुकी कृपा प्राप्त नहीं हो सकी।

তবে রাজা অট্টালিকা হৈতে তলেতে আইলা ।
কাশী-মিশ্র, পড়িছা-পাত্র, দুঁহে আনাইলা ॥১১৯॥

তবে রাজা অট্টালিকা হৈতে তলেতে আইলা ।
কাশী-মিশ্র, পড়িছা-পাত্র, দুঁহে আনাইলা ॥১১৯॥

तबे—तत्पश्चात्; **राजा**—राजा; **अट्टालिका हैते**—महल की छत से; **तलेते**—नीचे; **आइला**—आये; **काशी-मिश्र**—काशी मिश्र; **पड़िछा-पात्र**—मन्दिर का निदेशक; **दुँहे**—उन दोनों को; **आनाइला**—बुलाया।

अनुवाद

इसके बाद राजा प्रतापरुद्र अपने महल की अटारी से नीचे चले आये और काशी मिश्र को तथा मन्दिर की देख-रेख करने वाले को बुला भेजा।

प्रतापरुद्र आज्ञा दिल सेइ दुई जने ।
प्रभु-स्थाने आसियाछेन यत प्रभुर गणे ॥ १२० ॥
सबारे स्वच्छन्द वासा, स्वच्छन्द प्रसाद ।
स्वच्छन्द दर्शन कराइह, नहे येन बाध ॥ १२१ ॥

प्रतापरुद्र आज्ञा दिल सेइ दुइ जने ।
प्रभु-स्थाने आसियाछेन यत प्रभुर गणे ॥ १२० ॥
सबारे स्वच्छन्द वासा, स्वच्छन्द प्रसाद ।
स्वच्छन्द दर्शन कराइह, नहे येन बाध ॥ १२१ ॥

प्रतापरुद्र—राजा प्रतापरुद्र ने; **आज्ञा दिल**—आज्ञा दी; **सेइ दुइ जने**—उन दोनों व्यक्तियों को; **प्रभु-स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **आसियाछेन**—आ पहुँचे हैं; **यत**—जितने भक्त; **प्रभुर गणे**—प्रभु के संगी साथी; **सबारे**—उन सबको; **स्वच्छन्द**—सुविधाजनक; **वासा**—निवासस्थान; **स्वच्छन्द**—सुविधा जनक; **प्रसाद**—प्रसाद; **स्वच्छन्द दर्शन**—सुविधाजनक दर्शन; **कराइह**—व्यवस्था करना; **नहे येन बाध**—जिससे कोई कठिनाई न हो।

अनुवाद

फिर महाराज प्रतापरुद्र ने काशी मिश्र तथा मन्दिर की देख-रेख करने वाले से कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों तथा संगियों के लिए आवास, प्रसाद तथा मन्दिर में दर्शन करने की सुविधा की समुचित व्यवस्था की जाए, जिससे उन्हें कोई कठिनाई न हो।

प्रभुर आज्ञा पालिह दुँहे सावधान हञा ।
आज्ञा नहे, तबु करिह, इङ्गित बुझिया ॥ १२२ ॥

प्रभुर आज्ञा पालिह दुँहे सावधान हञा ।
आज्ञा नहे, तबु करिह, इङ्गित बुझिया ॥ १२२ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **आज्ञा**—आज्ञा; **पालिह**—पालन की जाए; **दुँहे**—तुम दोनों; **सावधान**—सावधान; **हञा**—होकर; **आज्ञा नहे**—यद्यपि कोई प्रत्यक्ष आज्ञा नहीं है; **तबु**—तथापि; **करिह**—करो; **इङ्गित**—संकेत; **बुझिया**—समझकर।

अनुवाद

"श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञाओं का सावधानी से पालन होना चाहिए। यद्यपि महाप्रभु सीधे कोई आदेश नहीं देंगे, फिर भी उनके संकेतों को समझकर उनकी इच्छाओं का पालन किया जाए।"

এত বলি' বিদায় দিল সেই দুই-জনে ।
সার্বভৌম দেখিতে আইল বৈষ্ণব-মিলনে ॥ ১২৩ ॥

এত বলি' বিদায় দিল সেই দুই-জনে ।
সার্বভৌম দেখিতে আইল বৈষ্ণব-মিলনে ॥ १२३ ॥

এত বলি'—यह कहकर; **বিদায় দিল**—विदाई दी; **সেই দুই-জনে**—उन दोनों को; **সার্বভৌম**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **দেখিতে**—देखने के लिए; **আইল**—आये; **বৈষ্ণব-মিলনে**—सभी वैष्णवों की सभा में।

अनुवाद

यह कहकर राजा ने उन दोनों को जाने दिया। सार्वभौम भट्टाचार्य भी सारे वैष्णवों के समूह से मिलने गये।

গোপীনাথাচার্য ভট্টাচার্য সার্বভৌম ।
দূরে রহি' দেখে প্রভুর বৈষ্ণব-মিলন ॥ ১২৪ ॥

গোপীনাথাচার্য ভট্টাচার্য সার্বভৌম ।
দূরে রহি' দেখে প্রভুর বৈষ্ণব-মিলন ॥ १२४ ॥

গোপীনাথ-আচার্য—गोपीनाथ आचार्य; **ভট্টাচার্য সার্বভৌম**—सार्वभौम भट्टचार्य; **দূরে রহি'**—दूर खड़े होकर; **দেখে**—देखा; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **বৈষ্ণব-মিলন**—वैष्णवों से मिलन।

अनुवाद

गोपीनाथ आचार्य तथा सार्वभौम भट्टाचार्य दूर से श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ समस्त वैष्णवों का मिलन देखते रहे।

सिंह-द्वार डाहिने छाड़ि' सब वैष्णव-गण ।
काशी-मिश्र-गृह-पथे करिला गमन ॥ १२५ ॥

सिंह-द्वार डाहिने छाड़ि' सब वैष्णव-गण ।
काशी-मिश्र-गृह-पथे करिला गमन ॥ १२५ ॥

सिंह-द्वार डाहिने—सिंहद्वार की दाईं ओर; **छाड़ि'**—छोड़कर; **सब**—सभी; **वैष्णव-गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्त; **काशी-मिश्र-गृह**—काशी मिश्र के घर को; **पथे**—मार्ग पर; **करिला गमन**—जाने लगे।

अनुवाद

मन्दिर के मुख्य द्वार की दाईं ओर से सारे वैष्णव काशी मिश्र के घर की ओर जाने लगे।

हेन-काले महाप्रभु निज-गण-सङ्गे ।
वैष्णवे मिलिला आसि' पथे बहु-रङ्गे ॥ १२६ ॥

हेन-काले महाप्रभु निज-गण-सङ्गे ।
वैष्णवे मिलिला आसि' पथे बहु-रङ्गे ॥ १२६ ॥

हेन-काले—इस समय; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **निज-गण-सङ्गे**—अपने पार्षदों सहित; **वैष्णवे**—सारे वैष्णवों से; **मिलिला**—मिले; **आसि'**—आकर; **पथे**—पथ पर; **बहु-रङ्गे**—अत्यन्त हर्षपूर्वक।

अनुवाद

तभी मार्ग पर श्री चैतन्य महाप्रभु अपने निजी संगियों समेत सारे वैष्णवों से बड़ी ही प्रसन्नतापूर्वक मिले।

अद्वैत करिल प्रभुर चरण वन्दन ।
आचार्येरे कैल प्रभु प्रेम-आलिङ्गन ॥ १२७ ॥

अद्वैत करिल प्रभुर चरण वन्दन ।
आचार्य्येरे कैल प्रभु प्रेम-आलिङ्गन ॥ १२७॥

अद्वैत—अद्वैत आचार्य; **करिल**—किया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरण**—चरणकमलों की; **वन्दन**—पूजा; **आचार्य्येरे**—अद्वैत आचार्य को; **कैल**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **प्रेम-आलिङ्गन**—प्रेमपूर्वक आलिंगन।

अनुवाद

सर्वप्रथम अद्वैत आचार्य ने महाप्रभु के चरणकमलों की वन्दना की और महाप्रभु ने प्रेमवश तुरन्त उनका आलिंगन कर लिया।

প্রেমানন্দে হৈলা দুঁহে পরম অস্থির ।
সময় দেখিয়া প্রভু হৈলা কিছু ধীর ॥ ১২৮॥

प्रेमानन्दे हैला दुँहे परम अस्थिर ।
समय देखिया प्रभु हैला किछु धीर ॥ १२८॥

प्रेम-आनन्दे—प्रेम आनन्द में; **हैला**—हो गये; **दुँहे**—वे दोनों; **परम अस्थिर**—अत्यन्त विचलित; **समय**—परिस्थिति; **देखिया**—देखकर; **प्रभु**—प्रभु; **हैला**—हो गये; **किछु**—कुछ; **धीर**—धीर।

अनुवाद

प्रेमवश श्री चैतन्य महाप्रभु तथा अद्वैत आचार्य विचलित हो उठे। किन्तु काल तथा परिस्थिति देखकर महाप्रभु ने धीरज धारण की।

শ্রীবাসাদি করিল প্রভুর চরণ বন্দন ।
প্রত্যেকে করিল প্রভু প্রেম-আলিঙ্গন ॥ ১২৯॥

श्रीवासादि करिल प्रभुर चरण वन्दन ।
प्रत्येके करिल प्रभु प्रेम-आलिङ्गन ॥ १२९॥

श्रीवास-आदि—श्रीवास ठाकुर आदि भक्तों ने; **करिल**—किया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **चरण वन्दन**—चरण वन्दना; **प्रत्येके**—प्रत्येक को; **करिल**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **प्रेम-आलिङ्गन**—प्रेमपूर्वक आलिंगन।

अनुवाद

इसके बाद श्रीवास ठाकुर तथा सभी भक्तों ने महाप्रभु के

चरणकमलों की वन्दना की और महाप्रभु ने बारी-बारी से हर एक का अत्यन्त प्रेमभाव से आलिंगन किया।

একে একে সর্ব-ভক্তে কৈল সম্ভাষণ ।
সবা লঞা অভ্যন্তরে করিলা গমন ॥ ১৩০ ॥

একে একে সর্ব-ভক্তে কৈল সম্ভাষণ ।
সবা লঞা অভ্যন্তরে করিলা গমন ॥ ১৩০ ॥

एके एके—एक एक करके; **सर्व-भक्ते**—प्रत्येक भक्त को; **कैल**—किया; **सम्भाषण**—सम्बोधन; **सबा लञा**—उन सबको लेकर; **अभ्यन्तरे**—भीतर; **करिला गमन**—प्रवेश किया।

अनुवाद

महाप्रभु ने एक-एक करके सारे भक्तों को सम्बोधित किया और वे उन सबको अपने साथ घर के भीतर ले गये।

মিশ্রের আবাস সেই হয় অল্প স্থান ।
অসঙ্খ্য বৈষ্ণব তাহাঁ হৈল পরিমাণ ॥ ১৩১ ॥

মিশ্রের আবাস সেই হয় অল্প স্থান ।
অসঙ্খ্য বৈষ্ণব তাহাঁ হৈল পরিমাণ ॥ ১৩১ ॥

मिश्रेर आवास—काशी मिश्र का आवास; **सेइ**—वह; **हय**—है; **अल्प स्थान**—अपर्याप्त स्थान; **असङ्ख्य**—असीमित; **वैष्णव**—वैष्णव, भक्त; **ताहाँ**—वहाँ; **हैल**—थे; **परिमाण**—बहुत भीड़ हो गई।

अनुवाद

चूँकि काशी मिश्र के घर में पर्याप्त स्थान न था, इसलिए वहाँ एकत्र भक्तों की भीड़ लग गई।

আপন-নিকটে প্রভু সবা বসাইলা ।
আপনি শ্রী-হস্তে সবারে মাল্য-গন্ধ দিলা ॥ ১৩২ ॥

আপন-নিকটে প্রভু সবা বসাইলা ।
আপনি শ্রী-হস্তে সবারে মাল্য-গন্ধ দিলা ॥ ১৩২ ॥

आपन-निकटे—अपने निकट; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सबा**—उन सबको; **वसाइला**—बैठाया; **आपनि**—अपने; **श्री-हस्ते**—हाथ से; **सबारे**—सबको; **माल्य**—माला; **गन्ध**—चंदन का लेप; **दिला**—भेंट किया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने सारे भक्तों को अपने पास बैठाया और अपने हाथ से उन्हें मालाएँ तथा चन्दन-लेप दिया।

भट्टाचार्य, आचार्य तबे महाप्रभुर स्थाने ।
यथा-योग्य मिलिला सबाकार सने ॥ १३३॥

भट्टाचार्य्र, आचार्य्र तबे महाप्रभुर स्थाने ।
य्रथा-य्रोग्य मिलिला सबाकार सने ॥ १३३॥

भट्टाचार्य्र—सार्वभौम भट्टाचार्य; **आचार्य्र**—गोपीनाथ आचार्य; **तबे**—तत्पश्चात्; **महाप्रभुर स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के निवास पर; **य्रथा-य्रोग्य**—उचित प्रकार से; **मिलिला**—मिले; **सबाकार सने**—वहाँ एकत्रित सभी वैष्णवों के साथ।

अनुवाद

इसके बाद गोपीनाथ आचार्य तथा सार्वभौम भट्टाचार्य श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान पर सभी वैष्णवों से समुचित ढंग से मिले।

अद्वैतेरे कहेन प्रभु मधुर वचने ।
आजि आमि पूर्ण हइलाओ तोमार आगमने ॥ १३४॥

अद्वैतेरे कहेन प्रभु मधुर वचने ।
आजि आमि पूर्ण हइलाङ तोमार आगमने ॥ १३४॥

अद्वैतेरे—अद्वैत आचार्य प्रभु को; **कहेन**—कहा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मधुर वचने**—मधुर वाणी में; **आजि**—आज; **आमि**—मैं; **पूर्ण**—पूर्ण; **ह-इलाङ**—हो गया; **तोमार**—आपके; **आगमने**—आगमन से।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने मीठे वचनों से अद्वैत आचार्य प्रभु को सम्बोधित किया, "हे प्रिय महाशय, आपके आने से आज मैं पूर्ण हो गया हूँ।"

অদ্বৈত কহে,—ঈশ্বরের এই স্বভাব হয় ।
যদ্যপি আপনে পূর্ণ, সর্বৈশ্বর্য-ময় ॥ ১৩৫ ॥
তথাপি ভক্ত-সঙ্গে হয় সুখোল্লাস ।
ভক্ত-সঙ্গে করে নিত্য বিবিধ বিলাস ॥ ১৩৬ ॥

অদ্বৈত কহে,—ঈশ্বরের এই স্বভাব হয় ।
যদ্যপি আপনে পূর্ণ, সর্বৈশ্বর্য-ময় ॥ ১৩৫ ॥
তথাপি ভক্ত-সঙ্গে হয় সুখোল্লাস ।
ভক্ত-সঙ্গে করে নিত্য বিবিধ বিলাস ॥ ১৩৬ ॥

অদ্বৈত কহে—अद्वैत आचार्य प्रभु ने कहा; **ईश्वरेर**—भगवान् का; **एइ**—यह; **स्वभाव**—स्वभाव; **हय**—होता है; **यद्यपि**—यद्यपि; **आपने**—स्वयं; **पूर्ण**—पूर्ण; **सर्व-ऐश्वर्य-मय**—सभी ऐश्वर्य से पूर्ण; **तथापि**—फिर भी; **भक्त-सङ्गे**—भक्तों के संग; **हय**—है; **सुख-उल्लास**—अत्यन्त आनन्द; **भक्त-सङ्गे**—भक्तों के साथ; **करे**—करते हैं; **नित्य**—सदा; **विविध**—विभिन्न; **विलास**—लीलाएँ।

अनुवाद

अद्वैत आचार्य प्रभु ने उत्तर दिया, "यह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का स्वाभाविक गुण है। यद्यपि वे स्वयं सम्पूर्ण हैं और समस्त ऐश्वर्यों से युक्त हैं, किन्तु वे अपने भक्तों के संग में अनेक प्रकार की नित्य लीलाएँ करके दिव्य आनन्द का आस्वादन करते हैं।"

বাসুদেব দেখি' প্রভু আনন্দিত হঞা ।
তাঁরে কিছু কহে তাঁর অঙ্গে হস্ত দিয়া ॥ ১৩৭ ॥

বাসুদেব দেখি' প্রভু আনন্দিত হঞা ।
তাঁরে কিছু কহে তাঁর অঙ্গে হস্ত দিয়া ॥ ১৩৭ ॥

বাসুদেব—वासुदेव; **দেখি'**—देखकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **আনন্দিত হঞা**—अत्यन्त आनन्दित होकर; **তাঁরে**—उनको; **কিছু কহে**—कुछ कहा; **তাঁর অঙ্গে**—उसके शरीर पर; **হস্ত দিয়া**—अपना हाथ रखकर।

अनुवाद

"महाप्रभु ने ज्योंही मुकुन्द दत्त के बड़े भाई वासुदेव दत्त को देखा, त्योंही वे तुरन्त अत्यन्त प्रसन्न हो उठे और उनके शरीर पर अपना हाथ रखकर बोलने लगे।

যদ্যপি মুকুন্দ——আমা-সঙ্গে শিশু হৈতে ।
তাঁহা হৈতে অধিক সুখ তোমারে দেখিতে ॥ ১৩৮॥

য়দ্যপি মুকুন্দ——আমা-সঙ্গে শিশু হৈতে ।
তাঁহা হৈতে অধিক সুখ তোমারে দেখিতে ॥ ১৩৮॥

য়দ্যপি—যদ্যপি; **মুকুন্দ**—मुकुन्द; **আমা-সঙ্গে**—मेरे साथ; **শিশু হৈতে**—बचपन से; **তাঁহা হৈতে**—उसकी अपेक्षा; **অধিক**—अधिक; **সুখ**—सुख; **তোমারে দেখিতে**—आपको देखकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "यद्यपि मुकुन्द मेरा बचपन का मित्र है, किन्तु उसकी तुलना में आपको देखकर मुझे कहीं अधिक प्रसन्नता हो रही है।"

तात्पर्य

वासुदेव दत्त श्री चैतन्य महाप्रभु के बचपन के मित्र मुकुन्द दत्त के बड़े भाई थे। मित्र को देखकर प्रसन्नता होनी स्वाभाविक है, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु ने वासुदेव दत्त से बताया कि उनको देखकर उन्हें अपने मित्र के मिलने से बढ़कर प्रसन्नता हुई है।

বাসু কহে,——মুকুন্দ আদৌ পাইল তোমার সঙ্গ ।
তোমার চরণ পাইল সেই পুনর্জ্জন্ম ॥ ১৩৯॥

বাসু কহে,——মুকুন্দ আদৌ পাইল তোমার সঙ্গ ।
তোমার চরণ পাইল সেই পুনর্জন্ম ॥ ১৩৯॥

বাসু কহে—वासुदेव दत्त ने कहा; **মুকুন্দ**—मुकुन्द; **আদৌ**—शुरू में; **পাইল**—पाया; **তোমার সঙ্গ**—आपका संग; **তোমার চরণ**—आपके चरणकमल; **পাইল**—पाये; **সেই**—वह; **পুনঃ-জন্ম**—दिव्य पुनर्जन्म।

अनुवाद

वासुदेव ने उत्तर दिया, "मुकुन्द को प्रारम्भ में आपका साथ मिला। अतएव उसने आपके चरणकमलों की शरण ग्रहण कर ली है। यही उसका दिव्य पुनर्जन्म है।"

ছোট হঞা মুকুন্দ এবে হৈল আমার জ্যেষ্ঠ ।
তোমার কৃপা-পাত্র তাতে সর্ব-গুণে শ্রেষ্ঠ ॥ ১৪০ ॥

छोट हञा मुकुन्द एबे हैल आमार ज्येष्ठ ।
तोमार कृपा-पात्र ताते सर्व-गुणे श्रेष्ठ ॥ १४० ॥

छोट हञा—छोटा होने पर; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **एबे**—अब; **हैल**—हो गया है; **आमार**—मेरा; **ज्येष्ठ**—वरिष्ठ; **तोमार**—आपका; **कृपा-पात्र**—कृपापात्र; **ताते**—अतः; **सर्व-गुणे**—सभी सद्गुणों में; **श्रेष्ठ**—श्रेष्ठ।

अनुवाद

इस तरह वासुदेव दत्त ने अपने छोटे भाई मुकुन्द से अपनी कनिष्ठता स्वीकार कर ली। उन्होंने कहा, "यद्यपि मुकुन्द मुझ से छोटा है, किन्तु उसे आपकी कृपा पहले प्राप्त हुई। अतः वह मुझसे आध्यात्मिक दृष्टि से वरिष्ठ हो गया। इसके अतिरिक्त, आप उस पर बहुत कृपालु हैं। इस तरह वह सारे सद्गुणों में मुझसे वरिष्ठ है।"

পুনঃ প্রভু কহে—আমি তোমার নিমিত্তে ।
দুই পুস্তক আনিয়াছি 'দক্ষিণ' হইতে ॥ ১৪১ ॥

पुनः प्रभु कहे—आमि तोमार निमित्ते ।
दुइ पुस्तक आनियाछि 'दक्षिण' हइते ॥ १४१ ॥

पुनः—दोबारा; **प्रभु कहे**—महाप्रभु ने कहा; **आमि**—मैं; **तोमार निमित्ते**—आपके लिए; **दुइ**—दो; **पुस्तक**—पुस्तकें; **आनियाछि**—लाया हूँ; **दक्षिण हइते**—दक्षिण भारत से।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "मैं केवल आपके लिए दक्षिण भारत से दो पुस्तकें लाया हूँ।

স্বরূপের ঠাঞি আছে, লহ তা লিখিয়া ।
বাসুদেব আনন্দিত পুস্তক পাঞা ॥ ১৪২ ॥

स्वरूपेर ठाञि आछे, लह ता लिखिया ।
वासुदेव आनन्दित पुस्तक पाञा ॥ १४२ ॥

स्वरूपेर ठाञि—स्वरूप दामोदर के पास है; **आछे**—वे हैं; **लह**—आप ले लो; **ता**—उन्हें; **लिखिया**—नकल करके; **वासुदेव**—वासुदेव; **आनन्दित**—अत्यन्त प्रसन्न; **पुस्तक**—पुस्तकों को; **पाञा**—पाकर।

अनुवाद

"वे पुस्तकें स्वरूप दामोदर के पास रखी हैं और आप उनकी नकल करवा सकते हैं।" यह सुनकर वासुदेव अत्यन्त प्रसन्न हुए।

प्रत्येक वैष्णव सबे लिखिया लइल ।
क्रमे क्रमे दुइ ग्रन्थ सर्वत्र व्यापिल ॥ १४३ ॥

प्रत्येक वैष्णव सबे लिखिया लइल ।
क्रमे क्रमे दुइ ग्रन्थ सर्वत्र व्यापिल ॥ १४३ ॥

प्रत्येक—प्रत्येक; **वैष्णव**—भक्त ने; **सबे**—सब; **लिखिया**—नकल; **लइल**—कर लिया; **क्रमे क्रमे**—शनैः शनैः; **दुइ ग्रन्थ**—दोनों ग्रन्थ; **सर्वत्र**—सर्वत्र; **व्यापिल**—प्रसारित हो गये।

अनुवाद

प्रत्येक वैष्णव ने इन दोनों पुस्तकों की प्रतिलिपि कर ली। धीरे-धीरे ये दोनों पुस्तकें (ब्रह्म-संहिता तथा श्रीकृष्णकर्णामृत) सारे भारत में व्याप्त हो गईं।

श्रीवासाद्ये कहे प्रभु करि' महा-प्रीत ।
तोमार चारि-भाइर आमि हइनु विक्रीत ॥ १४४ ॥

श्रीवासाद्ये कहे प्रभु करि' महा-प्रीत ।
तोमार चारि-भाइर आमि हइनु विक्रीत ॥ १४४ ॥

श्रीवास-आद्ये—श्रीवास तथा उनके तीन भाइयों को; **कहे**—कहने लगे; **प्रभु**—महाप्रभु; **करि'**—करके; **महा-प्रीत**—अत्यन्त स्नेहपूर्वक; **तोमार**—आप; **चारि-भाइर**—चारों भाइयों का; **आमि**—मैं; **हइनु**—हो गया; **विक्रीत**—खरीदा गया।

अनुवाद

महाप्रभु ने श्रीवास तथा उनके भाइयों को अत्यन्त प्रेम तथा स्नेह के साथ सम्बोधित किया, "मैं तो इतना कृतज्ञ हूँ कि तुम चारों भाइयों ने मुझे खरीद लिया है।"

শ্রীবাস কহেন,—কেনে কহ বিপরীত ।
কৃপা-মূল্যে চারি ভাই হই তোমার ক্রীত ॥ ১৪৫ ॥

শ্রীবাস কহেন,—কেনে কহ বিপরীত ।
কৃপা-মূল্যে চারি ভাই হই তোমার ক্রীত ॥ ১৪৫ ॥

শ্রীবাস কহেন—শ্रीवास ठाकुर ने उत्तर दिया; **केने**—क्यों; **कह विपरीत**—आप विपरीत क्यों बोलते हैं; **कृपा-मूल्ये**—आपकी कृपा के मूल्य से; **चारि भाइ**—हम चारों भाई; **हइ**—हो गये हैं; **तोमार**—आपके द्वारा; **क्रीत**—खरीदे गये।

अनुवाद

तब श्रीवास ने महाप्रभु से कहा, "आप उल्टा क्यों कह रहे हैं? वास्तव में हम चारों भाई आपकी कृपा द्वारा खरीदे जा चुके हैं।"

শঙ্করে দেখিয়া প্রভু কহে দামোদরে ।
সগৌরব-প্রীতি আমার তোমার উপরে ॥ ১৪৬ ॥

শঙ্করে দেখিয়া প্রভু কহে দামোদরে ।
সগৌরব-প্রীতি আমার তোমার উপরে ॥ ১৪৬ ॥

শঙ্করে দেখিয়া—शंकर को देखकर; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **कहे**—कहा; **दामोदरे**—दामोदर को; **स-गौरव-प्रीति**—आदरपूर्वक प्रेम; **आमार**—मेरा; **तोमार उपरे**—आप पर।

अनुवाद

शंकर को देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने दामोदर से कहा, "तुम पर मेरा स्नेह गौरव से युक्त है।

तात्पर्य

यहाँ पर महाप्रभु दामोदर पंडित से कह रहे हैं, जो स्वरूप दामोदर से भिन्न व्यक्ति हैं। दामोदर पंडित शंकर के बड़े भाई हैं। इस तरह महाप्रभु ने दामोदर को बतलाया कि उनका दामोदर के प्रति प्रेम आदर के स्तर पर है। किन्तु उनके छोटे भाई शंकर के प्रति महाप्रभु का प्रेम शुद्ध प्रेम के स्तर पर था।

শুদ্ধ কেবল-প্রেম শঙ্কর-উপরে ।
অতএব তোমার সঙ্গে রাখহ শঙ্করে ॥ ১৪৭ ॥

शुद्ध केवल-प्रेम शङ्कर-उपरे ।
अतएव तोमार सङ्गे राखह शङ्करे ॥ १४७॥

शुद्ध केवल-प्रेम—शुद्ध प्रेम; **शङ्कर-उपरे**—शंकर पर; **अतएव**—अतएव; **तोमार सङ्गे**—अपने साथ; **राखह**—रखो; **शङ्करे**—शंकर।

अनुवाद

"इसलिए तुम अपने छोटे भाई शंकर को अपने साथ रखो, क्योंकि वह मुझसे शुद्ध प्रेम से जुड़ा हुआ है।"

দামোদর কহে,—শঙ্কর ছোট আমা হৈতে ।
এবে আমার বড় ভাই তোমার কৃপাতে ॥ ১৪৮॥

दामोदर कहे,—शङ्कर छोट आमा हैते ।
एबे आमार बड़ भाइ तोमार कृपाते ॥ १४८॥

दामोदर कहे—दामोदर पण्डित ने कहा; **शङ्कर**—शंकर; **छोट**—छोटा; **आमा हैते**—मुझसे; **एबे**—अब; **आमार**—मेरा; **बड़ भाइ**—बड़ा भाई; **तोमार**—आपकी; **कृपाते**—कृपा से।

अनुवाद

दामोदर पंडित ने उत्तर दिया, "शंकर मेरा छोटा भाई तो है, किन्तु आज से वह मेरा बड़ा भाई बन गया, क्योंकि उस पर आपकी विशेष कृपा है।"

শিবানন্দে কহে প্রভু,—তোমার আমাতে ।
গাঢ় অনুরাগ হয়, জানি আগে হৈতে ॥ ১৪৯॥

शिवानन्दे कहे प्रभु,—तोमार आमाते ।
गाढ़ अनुराग हय, जानि आगे हैते ॥ १४९॥

शिवानन्दे—शिवानन्द सेन को; **कहे**—कहा; **प्रभु**—महाप्रभु; **तोमार**—तुम्हारा; **आमाते**—मुझ पर; **गाढ़ अनुराग**—गहरा प्रेम; **हय**—है; **जानि**—मैं जानता हूँ; **आगे हैते**—आरम्भ से ही।

अनुवाद

फिर शिवानन्द सेन की ओर मुड़ते हुए महाप्रभु ने कहा, "मैं जानता हूँ कि प्रारम्भ से ही मेरे प्रति तुम्हारा अतीव अनुराग रहा है।"

शुनि' शिवानन्द-सेन प्रेमाविष्ट हञा ।
दण्डवत् हञा पदे श्लोक पड़िया ॥ १५० ॥

शुनि' शिवानन्द-सेन प्रेमाविष्ट हञा ।
दण्डवत् हञा पदे श्लोक पड़िया ॥ १५० ॥

शुनि'—सुनकर; **शिवानन्द-सेन**—शिवानन्द सेन; **प्रेम-आविष्ट हञा**—प्रेमावेश में आकर; **दण्डवत् हञा**—दण्डवत् करके; **पड़े**—गिर गये; **श्लोक**—एक श्लोक; **पड़िया**—पढ़कर।

अनुवाद

यह सुनते ही शिवानन्द सेन भावविभोर हो उठे और महाप्रभु को प्रणाम करके भूमि पर गिर पड़े। फिर उन्होंने निम्नलिखित श्लोक सुनाना शुरू किया।

निमज्जतोऽनन्त भवार्णवान्तश्
चिराय मे कूलमिवासि लब्धः ।
त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीम्
अनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥ १५१ ॥

निमज्जतोऽनन्त भवार्णवान्तश्
चिराय मे कूलमिवासि लब्धः ।
त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीम्
अनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥ १५१ ॥

निमज्जतः—डूबकर; **अनन्त**—हे अनन्त; **भव-अर्णव-अन्तः**—अज्ञान के अन्धकार के सागर में; **चिराय**—दीर्घ समय के बाद; **मे**—मुझे; **कूलम्**—किनारा; **इव**—जैसा; **असि**—आप हैं; **लब्धः**—मिले हैं; **त्वया**—आपसे; **अपि**—भी; **लब्धम्**—मिला है; **भगवन्**—हे मेरे स्वामी; **इदानीम्**—अब; **अनुत्तमम्**—सर्वोत्तम; **पात्रम्**—पात्र; **इदम्**—यह; **दयायाः**—आपकी कृपा के योग्य।

अनुवाद

"'हे प्रभु! हे असीम! यद्यपि मैं अज्ञान के सागर में डूबा हुआ था, किन्तु अब दीर्घकाल के बाद मैंने आपको उसी प्रकार प्राप्त किये हैं, जिस प्रकार किसी को समुद्र का किनारा मिल जाए। हे प्रभु, मुझे प्राप्त

करके आपने ऐसा उपयुक्त व्यक्ति प्राप्त किया है, जिस पर आप अपनी अहैतुकी कृपा प्रदान कर सकते हैं।'"

तात्पर्य

यह आलबन्दारु यामुनाचार्य विरचित स्तोत्ररत्न का श्लोक २१ है। अज्ञान का सागर, भौतिक शरीर पाने के कारण, जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा तथा रोग के पुनरावर्तन का भवसागर है, जिसमें गिरने पर भी मनुष्य भगवान् के साथ अपना सम्बन्ध पुनः जोड़ सकता है। वैसे तो भौतिक जीवन की ८४,००,००० योनियाँ हैं, किन्तु मानव योनि में जीव को जन्म तथा मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिलने का अवसर प्राप्त होता है। जब मनुष्य भगवान् का भक्त बन जाता है, तब जन्म-मृत्यु के भयावह सागर से उसका उद्धार हो जाता है। भगवान् उन पतित आत्माओं पर अपनी कृपा दिखाने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं, जो दुःखमय जीवन से संघर्ष कर रहे हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (१५.७) में कृष्ण द्वारा कहा गया है :

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥

"इस बद्ध जगत् में सारे जीव मेरे सनातन अंश हैं। बद्ध जीवन के कारण वे मन समेत छह इन्द्रियों से विकट जीवन-संघर्ष करते रहते हैं।"

इस तरह हर जीव इस भौतिक जगत् में घोर संघर्ष करता रहता है। वास्तव में जीव पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का अंश है और जब वह भगवान् की शरण में आ जाता है, तब उसे जन्म-मृत्यु के सागर से छुटकारा मिल जाता है। पतितात्माओं पर अत्यन्त दयालु होने के कारण भगवान् जीवों को अज्ञान के समुद्र से बाहर निकालने के लिए उत्सुक रहते हैं। यदि जीव अपनी स्थिति समझता है और भगवान् की शरण ग्रहण करता है, तो उसका जीवन सफल हो जाता है।

প্রথমে মুরারি-গুপ্ত প্রভুরে না মিলিয়া ।
বাহিরেতে পড়ি' আছে দণ্ডবৎ হঞা ॥ ১৫২॥
प्रथमे मुरारि-गुप्त प्रभुरे ना मिलिया ।
बाहिरेते पड़ि' आछे दण्डवत् हञा ॥ १५२॥

प्रथमे—पहले; **मुरारि-गुप्त**—मुरारि गुप्त; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **ना**—नहीं; **मिलिया**—मिलकर; **बाहिरेते**—बाहर; **पड़ि'**—गिरकर; **आछे**—वहाँ थे; **दण्डवत्**—दण्डवत्; **हञा**—होकर।

अनुवाद

मुरारि गुप्त पहले महाप्रभु से नहीं मिले, किन्तु दरवाजे के बाहर से ही उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया।

मुरारि ना देखिया प्रभु करे अन्वेषण ।
मुरारि लइते धाञा आइला बहु-जन ॥ १५३॥

मुरारि ना देखिया प्रभु करे अन्वेषण ।
मुरारि लइते धाञा आइला बहु-जन ॥ १५३॥

मुरारि—मुरारी; **ना**—नहीं; **देखिया**—देखने; **प्रभु**—महाप्रभु; **करे**—की; **अन्वेषण**—पूछताछ; **मुरारि**—मुरारी गुप्त; **लइते**—लेने के लिए; **धाञा**—दौड़कर; **आइला**—आये; **बहु-जन**—बहुत लोग।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने भक्तों के बीच मुरारि गुप्त को नहीं देखा, तो उन्होंने उनके विषय में पूछताछ की। फलतः अनेक लोग उन्हें महाप्रभु के पास लाने के लिए दौड़े-दौड़े गये।

तृण दुई-गुच्छ मुरारि दशने धरिया ।
महाप्रभु आगे गेला दैन्याधीन हञा ॥ १५४॥

तृण दुइ-गुच्छ मुरारि दशने धरिया ।
महाप्रभु आगे गेला दैन्याधीन हञा ॥ १५४॥

तृण—घास के; **दुइ**—दो; **गुच्छ**—गुच्छे; **मुरारि**—मुरारी; **दशने**—अपने दांतों में; **धरिया**—रखकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **आगे**—आगे; **गेला**—गया; **दैन्य-अधीन**—विनम्र होकर; **हञा**—होकर।

अनुवाद

इस तरह मुरारि गुप्त अपने दाँतो में तिनके के दो गुच्छे दबाकर अत्यन्त दीन-हीन भाव से महाप्रभु के समक्ष गये।

मुरारि देखिया प्रभु आइला मिलिते ।
पाछे भागे मुरारि, लागिला कहिते ॥ १५५ ॥

मुरारि देखिया प्रभु आइला मिलिते ।
पाछे भागे मुरारि, लागिला कहिते ॥ १५५ ॥

मुरारि—मुरारी; **देखिया**—देखकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—आये; **मिलिते**—मिलने के लिए; **पाछे**—पीछे; **भागे**—भाग गया; **मुरारि**—मुरारी; **लागिला**—लगा; **कहिते**—बोलने।

अनुवाद

यह देखकर कि मुरारि उनसे मिलने आ रहे हैं, श्री चैतन्य महाप्रभु उनके पास गये, किन्तु मुरारि दूर भागने लगे और इस प्रकार कहने लगे।

मोरे ना छुञिह, प्रभु, मुञि त' पामर ।
तोमार स्पर्श-योग्य नहे पाप कलेवर ॥ १५६ ॥

मोरे ना छुडिह, प्रभु, मुञि त' पामर ।
तोमार स्पर्श-योग्य नहे पाप कलेवर ॥ १५६ ॥

मोरे—मुझे; **ना छुडिह**—मत छुओ; **प्रभु**—मेरे प्रभु; **मुञि**—मैं; **त'**—निश्चित रूप से; **पामर**—अत्यन्त नीच; **तोमार**—आपके; **स्पर्श-योग्य**—स्पर्श के योग्य; **नहे**—नहीं; **पाप**—पापमय; **कलेवर**—शरीर।

अनुवाद

"हे प्रभु! कृपया आप मुझे न छुएँ। मैं अत्यन्त नीच हूँ और आपके छूने योग्य नहीं हूँ, क्योंकि मेरा शरीर पापमय है।"

प्रभु कहे,—मुरारि, कर दैन्य संवरण ।
तोमार दैन्य देखि' मोर विदीर्ण हय मन ॥ १५७ ॥

प्रभु कहे,—मुरारि, कर दैन्य संवरण ।
तोमार दैन्य देखि' मोर विदीर्ण हय मन ॥ १५७ ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **मुरारि**—मेरे प्रिय मुरारी; **कर दैन्य संवरण**—अपनी महान दीनता को रोको; **तोमार**—तुम्हारी; **दैन्य**—विनम्रता; **देखि'**—देखकर; **मोर**—मेरा; **विदीर्ण हय मन**—मन विचलित हो रहा है।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "हे मुरारि, कृपया तुम अपनी अनावश्यक दीनता बन्द करो। तुम्हारी दीनता देखकर मेरा मन विचलित हो रहा है।"

এত বলি' প্রভু তাঁরে কৈল আলিঙ্গন ।
নিকটে বসাঞা করে অঙ্গ সম্মার্জন ॥১৫৮॥

এত বলি' প্রভু তাঁরে কৈল আলিঙ্গন ।
নিকটে বসাঞা করে অঙ্গ সম্মার্জন ॥ ১৫৮ ॥

এত বলি'—यह कहकर; **প্রভু**—महाप्रभु ने; **তাঁরে**—उनको; **কৈল**—किया; **আলিঙ্গন**—आलिंगन; **নিকটে**—निकट; **বসাঞা**—बैठाकर; **করে**—किया; **অঙ্গ**—उसके शरीर के; **সম্মার্জন**—स्वच्छ।

अनुवाद

यह कहकर महाप्रभु ने मुरारि का आलिंगन किया और उन्हें अपने पास में बैठाया। फिर महाप्रभु अपने हाथों से उनका शरीर साफ करने लगे।

আচার্যরত্ন, বিদ্যানিধি, পণ্ডিত গদাধর ।
গঙ্গাদাস, হরি-ভট্ট, আচার্য পুরন্দর ॥১৫৯॥
প্রত্যেকে সবার প্রভু করি' গুণ গান ।
পুনঃ পুনঃ আলিঙ্গিয়া করিল সম্মান ॥১৬০॥

আচার্যরত্ন, বিদ্যানিধি, পণ্ডিত গদাধর ।
গঙ্গাদাস, হরি-ভট্ট, আচার্য পুরন্দর ॥ ১৫৯ ॥
প্রত্যেকে সবার প্রভু করি' গুণ গান ।
পুনঃ পুনঃ আলিঙ্গিয়া করিল সম্মান ॥ ১৬০ ॥

আচার্যরত্ন—आचार्यरत्न; **বিদ্যানিধি**—विद्यानिधि; **পণ্ডিত গদাধর**—पण्डित गदाधर; **গঙ্গাদাস**—गंगादास; **হরি-ভট্ট**—हरिभट्ट; **আচার্য পুরন্দর**—आचार्य पुरन्दर; **প্রত্যেকে**—प्रत्येक; **সবার**—उन सबका; **প্রভু**—महाप्रभु; **করি' গুণ গান**—गुणगान करके; **পুনঃ পুনঃ**—बारम्बार; **আলিঙ্গিয়া**—आलिंगन करके; **করিল**—किया; **সম্মান**—सम्मान।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने आचार्यरत्न, विद्यानिधि, पंडित

गदाधर, गंगादास, हरिभट्ट तथा आचार्य पुरन्दर इत्यादि सभी भक्तों का बारम्बार आलिंगन किया। उनके सद्गुणों का बखान किया और बारम्बार उनका सम्मान किया।

সবারে সম্মানি' প্রভুর হইল উল্লাস ।
হরিদাসে না দেখিয়া কহে,—কাহাঁ হরিদাস ॥ ১৬১ ॥

সবারে সম্মানি' প্রভুর হইল উল্লাস ।
হরিদাসে না দেখিয়া কহে,—কাহাঁ হরিদাস ॥ ১৬১ ॥

सबारे सम्मानि'—प्रत्येक भक्त का सम्मान करके; **प्रभुर**—महाप्रभु को; **हइल**—हुआ; **उल्लास**—हर्ष, आनन्द; **हरिदासे**—हरिदास ठाकुर को; **ना देखिया**—न देखकर; **कहे**—कहा; **काहाँ हरिदास**—हरिदास कहाँ है ?

अनुवाद

इस तरह प्रत्येक भक्त का सम्मान करके श्री चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त प्रफुल्लित हुए। किन्तु हरिदास ठाकुर को न देखकर उन्होंने पूछा, "हरिदास कहाँ हैं ?"

দূর হৈতে হরিদাস গোসাঞে দেখিয়া ।
রাজপথ-প্রান্তে পড়ি' আছে দণ্ডবৎ হঞা ॥ ১৬২ ॥

দূর হৈতে হরিদাস গোসাঞে দেখিয়া ।
রাজপথ-প্রান্তে পড়ি' আছে দণ্ডবত্ হঞা ॥ ১৬২ ॥

दूर हैते—दूर से; **हरिदास गोसाञे**—हरिदास ठाकुर; **देखिया**—देखकर; **राजपथ-प्रान्ते**—राजपथ की एक ओर; **पड़ि'**—गिरकर; **आछे**—वे थे; **दण्डवत् हञा**—दण्डवत् प्रणाम कर रहे।

अनुवाद

तभी श्री चैतन्य महाप्रभु ने देखा कि हरिदास ठाकुर दूर से, रास्ते पर गिरकर, उन्हें प्रणाम कर रहे हैं।

মিলন-স্থানে আসি' প্রভুরে না মিলিলা ।
রাজপথ-প্রান্তে দূরে পড়িয়া রহিলা ॥ ১৬৩ ॥

मिलन-स्थाने आसि' प्रभुरे ना मिलिला ।
राजपथ-प्रान्ते दूरे पड़िया रहिला ॥ १६३॥

मिलन-स्थाने—मिलन स्थल पर; **आसि'**—आकर; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **ना**—नही; **मिलिला**—मिले; **राजपथ-प्रान्ते**—राजपथ की एक ओर; **दूरे**—दूर ही; **पड़िया**—भूमि पर पड़े; **रहिला**—रहे।

अनुवाद

हरिदास ठाकुर महाप्रभु के मिलन-स्थल पर नहीं आये, अपितु वे दूर ही सामान्य रास्ते पर दण्डवत् पड़े रहे।

ভক্ত সব ধাঞা আইল হরিদাসে নিতে ।
প্রভু তোমায় মিলিতে চাহে, চলহ ত্বরিতে ॥ ১৬৪॥

भक्त सब धाञा आइल हरिदासे निते ।
प्रभु तोमाय मिलिते चाहे, चलह त्वरिते ॥ १६४॥

भक्त—भक्त; **सब**—सभी; **धाञा**—दौड़कर; **आइल**—आये; **हरिदासे**—हरिदास को; **निते**—लेने; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तोमाय**—आपसे; **मिलिते**—मिलने के लिए; **चाहे**—चाहते हैं; **चलह**—आओ; **त्वरिते**—अति शीघ्र।

अनुवाद

तब सारे भक्त हरिदास ठाकुर के पास जाकर बोले, "महाप्रभु आपसे मिलना चाहते हैं। कृपया तुरन्त आइये।"

হরিদাস কহে,—মুঞি নীচ-জাতি ছার ।
মন্দির-নিকটে যাইতে মোর নাহি আধিকার ॥ ১৬৫॥

हरिदास कहे,—मुञि नीच-जाति छार ।
मन्दिर-निकटे ग्राइते मोर नाहि आधिकार ॥ १६५॥

हरिदास कहे—हरिदास ठाकुर ने कहा; **मुञि**—मैं; **नीच-जाति**—नीच जाति का; **छार**—पतित, घृणास्पद; **मन्दिर-निकटे**—मन्दिर के निकट; **ग्राइते**—जाने का; **मोर**—मेरा; **नाहि**—नहीं है; **आधिकार**—अधिकार।

अनुवाद

हरिदास ठाकुर ने उत्तर दिया, "मैं मन्दिर के पास नहीं जा सकता,

क्योंकि मैं नीच जाति का अधम व्यक्ति हूँ। मुझे वहाँ जाने का कोई अधिकार नहीं है।"

तात्पर्य

यद्यपि हरिदास ठाकुर इतने सम्मानित वैष्णव थे कि उन्हें हरिदास गोस्वामी कहा जाता था, किन्तु फिर भी वे सामान्य लोगों के विचारों को विचलित नहीं करना चाहते थे। वे इतने सम्मान्य थे कि उन्हें ठाकुर तथा गोसांइ कहा जाता था, जो महाभागवत वैष्णवों की पदवियाँ हैं। सामान्यतया गुरु को *गोसांइ* तथा परमहंसों को *ठाकुर* कहा जाता है, क्योंकि वे आध्यात्मिकता के सर्वोच्च स्तर पर अवस्थित होते हैं। तो भी हरिदास ठाकुर मन्दिर के पास नहीं जाना चाहते थे, यद्यपि स्वयं श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें वहाँ बुलाया था। जगन्नाथ मन्दिर में अब भी वर्णाश्रम धर्म वाले हिन्दुओं को ही प्रवेश मिलता है। जो अहिन्दू हैं, उन्हें मन्दिर में प्रवेश करने नहीं दिया जाता। यह बहुत प्राचीन विधान है, अतएव हरिदास ठाकुर मन्दिर के निकट भी नहीं जाना चाह रहे थे, यद्यपि वे मन्दिर में प्रवेश करने के लिए सर्वथा योग्य एवं सक्षम थे। यही वैष्णव दैन्य कहलाता है।

निभृते टोटा-मध्ये स्थान यदि पाङ ।
ताहाँ पड़ि' रहो, एकले काल गोङाङ ॥ १६६॥

निभृते टोटा-मध्ये स्थान यदि पाङ ।
ताहाँ पड़ि' रहो, एकले काल गोङाङ ॥ १६६॥

निभृते—एकान्त स्थान में; **टोटा-मध्ये**—उद्यान के भीतर; **स्थान**—स्थान; **यदि**—यदि; **पाङ**—मुझे मिले; **ताहाँ**—वहाँ; **पड़ि' रहो**—मैं पड़ा रहूँगा; **एकले**—अकेला; **काल**—समय; **गोङाङ**—व्यतीत करूँगा।

अनुवाद

तब हरिदास ठाकुर ने अपनी इच्छा व्यक्त की, "यदि मुझे मन्दिर के निकट कोई एकान्त स्थान मिल जाता, तो मैं वहाँ अकेले रहकर अपना समय बिताता।

জগন্নাথ-সেবকের মোর স্পর্শ নাহি হয় ।
তাহাঁ পড়ি' রহোঁ,—মোর এই বাঞ্ছা হয় ॥ ১৬৭ ॥

জগন্নাথ-সেবকের মোর স্পর্শ নাহি হয় ।
তাহাঁ পড়ি' রহোঁ,—মোর এই বাঞ্ছা হয় ॥ ১৬৭ ॥

জগন্নাথ-সেবকের—भगवान् जगन्नाथ के सेवकों का; **মোর**—मेरा; **স্পর্শ**—स्पर्श; **নাহি**—नहीं; **হয়**—हो; **তাহাঁ**—वहाँ; **পড়ি' রহোঁ**—मैं पड़ा रहूँ; **মোর**—मेरी; **এই**—यह; **বাঞ্ছা**—इच्छा; **হয়**—है।

अनुवाद

"मैं नहीं चाहता कि भगवान् जगन्नाथ के सेवक मेरा स्पर्श करें। मैं वहाँ बगीचे में अकेला रहूँगा। यही मेरी इच्छा है।"

এই কথা লোক গিয়া প্রভুরে কহিল ।
শুনিয়া প্রভুর মনে বড় সুখ হইল ॥ ১৬৮ ॥

এই কথা লোক গিয়া প্রভুরে কহিল ।
শুনিয়া প্রভুর মনে বড় সুখ হইল ॥ ১৬৮ ॥

এই কথা—यह सन्देश; **লোক**—लोगों ने; **গিয়া**—जाकर; **প্রভুরে**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **কহিল**—सूचित किया; **শুনিয়া**—सुनकर; **প্রভুর মনে**—महाप्रभु के मन में; **বড়**—अत्यन्त; **সুখ**—प्रसन्नता; **হইল**—हुई।

अनुवाद

जब लोगों ने श्री चैतन्य महाप्रभु को यह सन्देश दिया, तो वे यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

হেন-কালে কাশী-মিশ্র, পড়িছা,—দুই জন ।
আসিয়া করিল প্রভুর চরণ বন্দন ॥ ১৬৯ ॥

হেন-কালে কাশী-মিশ্র, পড়িছা,—দুই জন ।
আসিয়া করিল প্রভুর চরণ বন্দন ॥ ১৬৯ ॥

হেন-কালে—इस समय; **কাশী-মিশ্র**—काशी मिश्र; **পড়িছা**—अध्यक्ष; **দুই জন**—दो व्यक्ति; **আসিয়া**—आकर; **করিল**—किया; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **চরণ বন্দন**—चरण वन्दन।

अनुवाद

उसी समय काशी मिश्र मन्दिर की देख-रेख करने वाले के साथ आये और उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर अपना सादर नमस्कार किया।

सर्व वैष्णव देखि' सुख बड़ पाइला ।
यथा-योग्य सबा-सने आनन्दे मिलिला ॥ १७० ॥

सर्व वैष्णव देखि' सुख बड़ पाइला ।
यथा-योग्य सबा-सने आनन्दे मिलिला ॥ १७० ॥

सर्व वैष्णव—सभी वैष्णवों को; **देखि'**—देखकर; **सुख**—हर्ष; **बड़**—अत्यधिक; **पाइला**—पाया; **यथा-योग्य**—उचित प्रकार से; **सबा-सने**—सबके साथ; **आनन्दे**—आनन्दपूर्वक; **मिलिला**—मिले।

अनुवाद

सारे वैष्णवों को एकसाथ देखकर काशी मिश्र तथा अध्यक्ष दोनों अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे उन सबसे समुचित रीति से अति प्रसन्नतापूर्वक मिले।

प्रभु-पदे दुई जने कैल निवेदने ।
आज्ञा देह',—वैष्णवेर करि समाधाने ॥ १७१ ॥

प्रभु-पदे दुइ जने कैल निवेदने ।
आज्ञा देह',—वैष्णवेर करि समाधाने ॥ १७१ ॥

प्रभु-पदे—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **दुइ जने**—उन दोनों ने; **कैल**—किया; **निवेदने**—निवेदन; **आज्ञा देह'**—कृपया आज्ञा दीजिए; **वैष्णवेर**—सभी वैष्णवों की; **करि**—करें; **समाधाने**—व्यवस्था।

अनुवाद

दोनों ने श्री चैतन्य महाप्रभु से निवेदन किया, "कृपया हमें आदेश दें, जिससे हम सारे वैष्णवों के रहने की उचित व्यवस्था कर सकें।

সবার করিয়াছি বাসা-গৃহ-স্থান ।
মহা-প্রসাদ সবাকারে করি সমাধান ॥ ১৭২॥

सबार करियाछि वासा-गृह-स्थान ।
महा-प्रसाद सबाकारे करि समाधान ॥ १७२॥

सबार—उन सबके लिए; **करियाछि**—हमने व्यवस्था कर दी है; **वासा-गृह-स्थान**—रहने के लिए निवासस्थानों की; **महा-प्रसाद**—महाप्रसाद; **सबाकारे**—उन सबको; **करि**—करें; **समाधान**—वितरण।

अनुवाद

"सारे वैष्णवों के रहने की व्यवस्था हो चुकी है। अब हम उन सबों को महा-प्रसाद वितरित करेंगे।"

প্রভু কহে,—গোপীনাথ, যাহ' বৈষ্ণব লঞা ।
যাহাঁ যাহাঁ কহে বাসা, তাহাঁ দেহ' লঞা ॥ ১৭৩॥

प्रभु कहे,—गोपीनाथ, याह' वैष्णव लञा ।
याहाँ याहाँ कहे वासा, ताहाँ देह' लञा ॥ १७३॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **गोपीनाथ**—मेरे प्रिय गोपीनाथ; **याह'**—कृपया जाओ; **वैष्णव लञा**—सभी वैष्णवों को लेकर; **याहाँ याहाँ**—जहाँ भी; **कहे**—वे कहे; **वासा**—निवासस्थान; **ताहाँ**—वहाँ; **देह'**—दो; **लञा**—स्वीकार करके।

अनुवाद

तुरन्त ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने गोपीनाथ आचार्य से कहा, "आप वैष्णवों के साथ जाएँ और काशी मिश्र तथा मन्दिर की देख-रेख करने वाले सज्जन जो भी निवासस्थान दें, वहाँ उन सबको रखने का प्रबन्ध करें।

মহা-প্রসাদান্ন দেহ বাণীনাথ-স্থানে ।
সর্ব-বৈষ্ণবের ইঁহো করিবে সমাধানে ॥ ১৭৪॥

महा-प्रसादान्न देह वाणीनाथ-स्थाने ।
सर्व-वैष्णवेर इँहो करिबे समाधाने ॥ १७४॥

महा-प्रसाद-अन्न—महाप्रसाद; **देह**—दो; **वाणीनाथ-स्थाने**—वाणीनाथ को; **सर्व-वैष्णवेर**—सभी वैष्णवों को; **इँहो**—वे; **करिबे**—करेंगे; **समाधाने**—वितरण।

अनुवाद

तब महाप्रभु ने काशी मिश्र तथा मन्दिर के अध्यक्ष से कहा, "जहाँ तक जगन्नाथजी के महाप्रसाद की बात है, उसका भार वाणीनाथ राय को दे दिया जाए, क्योंकि वे सारे वैष्णवों की देखभाल कर सकते हैं और उन्हें महाप्रसाद वितरित कर सकते हैं।"

आमार निकटे एई पुष्पेर उद्याने ।
एक-खानि घर आछे परम-निर्जने ॥ १७५ ॥

आमार निकटे एइ पुष्पेर उद्याने ।
एक-खानि घर आछे परम-निर्जने ॥ १७५ ॥

आमार निकटे—मेरे निवासस्थान के निकट; **एइ**—यह; **पुष्पेर उद्याने**—पुष्पों के उद्यान की; **एक-खानि**—एक; **घर**—कमरा; **आछे**—वहाँ है; **परम-निर्जने**—बिल्कुल एकान्त में।

अनुवाद

फिर श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मेरे स्थान के पास इस फुलवारी में एक कमरा है, जो अत्यन्त एकान्त में है।

सेई घर आमाके देह'——आछे प्रयोजन ।
निभृते वसिया ताहाँ करिब स्मरण ॥ १७६ ॥

सेइ घर आमाके देह'——आछे प्रयोजन ।
निभृते वसिया ताहाँ करिब स्मरण ॥ १७६ ॥

सेइ घर—वह कमरा; **आमाके देह'**—कृपया मुझे दो; **आछे प्रयोजन**—आवश्यकता है; **निभृते**—एकान्त स्थान में; **वसिया**—बैठकर; **ताहाँ**—वहाँ; **करिब स्मरण**—प्रभु के चरणकमल मैं स्मरण करूँगा।

अनुवाद

"वह कमरा मुझे दे दें, क्योंकि मुझे उसकी आवश्यकता है। मैं उस एकान्त स्थान में बैठकर भगवान् के चरणकमलों का स्मरण करूँगा।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु का यह कथन महत्त्वपूर्ण है। *निभृते वसिया ताहाँ*

करिब स्मरण—"मैं एकान्त स्थान में बैठकर भगवान् के चरणकमलों का स्मरण करूँगा।" नवदीक्षित शिष्यों को एकान्त में बैठकर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करते हुए भगवान् के चरणकमलों का स्मरण करने की नकल नहीं करनी है। हमें सदैव स्मरण रखना होगा कि यह तो स्वयं श्री चैतन्य महाप्रभु थे, जिन्हें अपने लिए या हरिदास ठाकुर के लिए एकान्त स्थान चाहिए था। कोई भी व्यक्ति सहसा हरिदास ठाकुर का पद प्राप्त नहीं कर सकता और न एकान्त स्थान में बैठकर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन तथा भगवान् के चरणकमलों का स्मरण कर सकता है। केवल हरिदास ठाकुर या श्री चैतन्य महाप्रभु ही ऐसा अभ्यास कर सकते हैं, जो स्वयं आचार्य के उचित व्यवहार को प्रदर्शित करते हैं।

आजकल हम देखते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के कुछ सदस्य एकान्त स्थान में बैठने के लिए अपना-अपना प्रचार कार्य छोड़ रहे हैं। यह शुभ लक्षण नहीं है। यह हकीकत है कि श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने नवदीक्षितों के लिए इस विधि की भर्त्सना की है। यहाँ तक कि उन्होंने एक गीत में लिखा है—*प्रतिष्ठार तरे, निर्जनेर घरे, तव हरिनाम केवल कैतव*—"हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने की इच्छा से एकान्त स्थान में बैठे रहना छलावा है।" नवदीक्षितों के लिए यह बिल्कुल सम्भव नहीं है। नवदीक्षित को तो गुरु के निर्देशानुसार परिश्रमपूर्वक कार्य करना चाहिए और इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय का प्रचार करना चाहिए। जब भक्ति परिपक्व हो जाय, तभी वह हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन करने के लिए एकान्त स्थान में बैठे, जैसाकि श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं किया था। यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं, किन्तु हमें शिक्षा देने के लिए वे छह वर्षों तक लगातार भारत का भ्रमण करते रहे और बाद में ही जगन्नाथ पुरी में रहने लगे। यहाँ तक कि जगन्नाथ पुरी में भी जगन्नाथ मन्दिर की विशाल सभाओं में वे हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन किया करते थे। कहने की बात यह है कि मनुष्य को अपने आध्यात्मिक जीवन के प्रारम्भ में हरिदास ठाकुर की नकल नहीं करनी चाहिए। पहले उसे अपनी भक्ति पक्की बनानी चाहिए और इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु का समर्थन प्राप्त करना चाहिए। तभी वह किसी एकान्त स्थान में

शान्तिपूर्वक बैठकर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन कर सकता है और भगवान् के चरणकमलों का स्मरण कर सकता है। इन्द्रियाँ अत्यन्त प्रबल होती हैं और यदि नवदीक्षित भक्त हरिदास ठाकुर की नकल करता है, तो उसके शत्रु (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मात्सर्य) उसे सतायेंगे और हैरान करेंगे। फलत: नवदीक्षित भक्त हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने के बदले गहरी नींद सोयेगा। प्रचार-कार्य उन्नत भक्तों के निमित्त है और जब वे भक्ति के धरातल पर और ऊँचे उठ जाएँ, तब वे एकान्त स्थान में रहकर हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन कर सकते हैं। किन्तु यदि कोई उन्नत आध्यात्मिक जीवन की केवल नकल करता है, तो उसका उसी तरह पतन होगा, जिस तरह वृन्दावन में सहजियों का होता है।

मिश्र कहे,——सब तोमार, चाह कि कारणे? ।
आपन-इच्छाय लह, येइ तोमार मने ॥ १७७॥

मिश्र कहे,——सब तोमार, चाह कि कारणे? ।
आपन-इच्छाय लह, येइ तोमार मने ॥ १७७॥

मिश्र कहे—काशी मिश्र ने कहा; **सब**—सब कुछ; **तोमार**—आपका; **चाह कि कारणे**—आप क्यों माँगते हैं; **आपन-इच्छाय**—आपकी अपनी इच्छा से; **लह**—आप ले लें; **येइ**—जो कुछ; **तोमार मने**—आपके मन में हो।

अनुवाद

तब काशी मिश्र ने श्री चैतन्य महाप्रभु से कहा, "हर वस्तु आपकी है। फिर माँगने से क्या लाभ? आप अपनी इच्छानुसार जो चाहें ले सकते हैं।

आमि-दुई हइ तोमार दास आज्ञाकारी ।
ये चाह, सेई आज्ञा देह' कृपा करि' ॥ १७८॥

आमि-दुइ हइ तोमार दास आज्ञाकारी ।
ये चाह, सेइ आज्ञा देह' कृपा करि' ॥ १७८॥

आमि—हम; **दुइ**—दो; **हइ**—हैं; **तोमार**—आपके; **दास**—दास; **आज्ञा-कारी**—आज्ञा

पालन करने वाले; **ग्रे चाह**—आप जो कुछ चाहें; **सेइ आज्ञा**—वही आज्ञा; **देह'**—दो; **कृपा करि'**—कृपा करके।

अनुवाद

"हे प्रभु, हम दोनों दास आपकी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए हैं। कृपा करके आप जो भी चाहें हमसे करने को कहें।"

এত কহি' দুই জনে বিদায় লইল ।
গোপীনাথ, বাণীনাথ—দুঁহে সঙ্গে নিল ॥ ১৭৯॥

एत कहि' दुइ जने विदाय लइल ।
गोपीनाथ, वाणीनाथ—दुँहे सङ्गे निल ॥ १७९॥

एत कहि'—यह कहकर; **दुइ जने**—वे दोनों; **विदाय लइल**—विदा ली; **गोपीनाथ**—गोपीनाथ आचार्य; **वाणीनाथ**—वाणीनाथ राय; **दुँहे सङ्गे निल**—उन दोनों को अपने साथ ले गये।

अनुवाद

यह कहकर काशी मिश्र तथा मन्दिर की देख-रेख करने वाले व्यक्ति ने विदा ली और गोपीनाथ तथा वाणीनाथ भी उनके साथ गये।

গোপীনাথে দেখাইল সব বাসা-ঘর ।
বাণীনাথ-ঠাঞি দিল প্রসাদ বিস্তর ॥ ১৮০॥

गोपीनाथे देखाइल सब वासा-घर ।
वाणीनाथ-ठाञि दिल प्रसाद विस्तर ॥ १८०॥

गोपीनाथे—गोपीनाथ आचार्य को; **देखाइल**—दिखाये; **सब**—सब; **वासा-घर**—निवासस्थान; **वाणीनाथ-ठाञि**—वाणीनाथ राय को; **दिल**—दिया; **प्रसाद विस्तर**—प्रचुर मात्रा में प्रसाद।

अनुवाद

तब गोपीनाथ को सारे निवासस्थान दिखलाये गये और वाणीनाथ को प्रचुर मात्रा में जगन्नाथजी का महा-प्रसाद दिया गया।

বাণীনাথ আইলা বহু প্রসাদ পিঠা লঞা ।
গোপীনাথ আইলা বাসা সংস্কার করিয়া ॥ ১৮১॥

वाणीनाथ आइला बहु प्रसाद पिठा लञा ।
गोपीनाथ आइला वासा संस्कार करिया ॥ १८१ ॥

वाणीनाथ—वाणीनाथ; **आइला**—लौट आये; **बहु**—प्रचुर मात्रा में; **प्रसाद**—प्रसाद; **पिठा लञा**—मिठाई लेकर; **गोपीनाथ**—गोपीनाथ आचार्य; **आइला**—लौट आये; **वासा**—निवासस्थान; **संस्कार करिया**—सफाई करके।

अनुवाद

इस तरह वाणीनाथ राय प्रचुर मात्रा में भगवान् जगन्नाथजी के प्रसाद के साथ-साथ मिठाई आदि लेकर लौटे। गोपीनाथ आचार्य भी सारे आवासीय कमरों की सफाई कराने के बाद लौट आये।

महाप्रभु कहे,—शुन, सर्व वैष्णव-गण ।
निज-निज-वासा सबे करह गमन ॥ १८२ ॥
महाप्रभु कहे,—शुन, सर्व वैष्णव-गण ।
निज-निज-वासा सबे करह गमन ॥ १८२ ॥

महाप्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **शुन**—कृपया सुनो; **सर्व वैष्णव-गण**—सभी वैष्णवगण; **निज-निज-वासा**—अपने अपने निवासस्थान को; **सबे**—आप सब; **करह**—करो; **गमन**—प्रस्थान।

अनुवाद

तभी श्री चैतन्य महाप्रभु ने सभी वैष्णवों को सम्बोधित करते हुए कहा, "सभी लोग सुनिये। अब आप लोग अपने अपने रिहायशी कमरों में जा सकते हैं।

समुद्र-स्नान करि' कर चूड़ा दरशन ।
तबे आजि इहँ आसि' करिबे भोजन ॥ १८३ ॥
समुद्र-स्नान करि' कर चूड़ा दरशन ।
तबे आजि इहँ आसि' करिबे भोजन ॥ १८३ ॥

समुद्र-स्नान—समुद्र में स्नान; **करि'**—समाप्त करके; **कर**—करो; **चूड़ा दरशन**—मन्दिर के शिखिर का दर्शन करके; **तबे**—उसके बाद; **आजि**—आज; **इहँ**—यहाँ; **आसि'**—लौटकर; **करिबे भोजन**—भोजन करो।

अनुवाद

"सभी लोग समुद्र जाकर स्नान करो और मन्दिर के शिखर के दर्शन करो। ऐसा करने के बाद यहाँ आकर भोजन प्राप्त करो।"

প্রভু নমস্করি' সবে বাসাতে চলিলা ।
গোপীনাথাচার্য সবে বাসা-স্থান দিলা ॥ ১৮৪॥

প্রভু নমস্করি' সবে বাসাতে চলিলা ।
গোপীনাথাচার্য্য সবে বাসা-স্থান দিলা ॥ ১৮৪॥

प्रभु नमस्करि'—श्री चैतन्य महाप्रभु को नमस्कार करके; **सबे**—सब भक्त; **वासाते चलिला**—अपने अपने निवासस्थान को चल पड़े; **गोपीनाथ-आचार्य्र**—गोपीनाथ आचार्य ने; **सबे**—प्रत्येक को; **वासा**—निवास; **स्थान**—स्थान; **दिला**—दिया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को नमस्कार करने के बाद सारे भक्त अपने अपने निवासस्थानों को चले गये और गोपीनाथ आचार्य ने उन सबको उनके कमरे दिखलाये।

মহাপ্রভু আইলা তবে হরিদাস-মিলনে ।
হরিদাস করে প্রেমে নাম-সঙ্কীর্তনে ॥ ১৮৫॥

মহাপ্রভু আইলা তবে হরিদাস-মিলনে ।
হরিদাস করে প্রেমে নাম-সঙ্কীর্তনে ॥ ১৮৫॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—आये; **तबे**—उसके बाद; **हरिदास-मिलने**—ठाकुर हरिदास को मिलने; **हरिदास**—ठाकुर हरिदास ने; **करे**—कर रहे; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **नाम-सङ्कीर्तने**—नाम संकीर्तन।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु हरिदास ठाकुर से मिलने गये और वहाँ देखा कि वे अत्यन्त प्रेम से महामन्त्र के कीर्तन में संलग्न हैं। हरिदास हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे / हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे—का कीर्तन कर रहे थे।

প্রভু দেখি' পড়ে আগে দণ্ডবৎ হঞা ।
প্রভু আলিঙ্গন কৈল তাঁরে উঠাঞা ॥ ১৮৬ ॥

प्रभु देखि' पड़े आगे दण्डवत् हञा ।
प्रभु आलिङ्गन कैल ताँरे उठाञा ॥ १८६ ॥

प्रभु देखि'—महाप्रभु को देखने के बाद; **पड़े**—गिर पड़े; **आगे**—उनके समक्ष; **दण्डवत्**—छड़ी की भाँति दण्डवत्; **हञा**—होकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **आलिङ्गन कैल**—आलिंगन किया; **ताँरे**—उनको; **उठाञा**—ऊपर उठाकर।

अनुवाद

ज्योंही हरिदास ठाकुर ने श्री चैतन्य महाप्रभु को देखा, वे उन्हें प्रणाम करने के लिए तुरन्त दण्डवत् गिर गये और श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें उठाकर अपने गले लगाया।

দুই-জনে প্রেমাবেশে করেন ক্রন্দনে ।
প্রভু-গুণে ভৃত্য বিকল, প্রভু ভৃত্য-গুণে ॥ ১৮৭ ॥

दुइ-जने प्रेमावेशे करेन क्रन्दने ।
प्रभु-गुणे भृत्य विकल, प्रभु भृत्य-गुणे ॥ १८७ ॥

दुइ-जने—वे दोनों; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **करेन क्रन्दने**—रोने लगे; **प्रभु-गुणे**—महाप्रभु के गुणों के; **भृत्य**—सेवक; **विकल**—विकल हो गया; **प्रभु**—प्रभु; **भृत्य-गुणे**—सेवक के गुणों से।

अनुवाद

तब महाप्रभु तथा उनके दास (हरिदास) दोनों ही प्रेमवश रुदन करने लगे। प्रभु अपने दास के गुण से और दास अपने स्वामी के गुण से प्रभावित थे।

तात्पर्य

मायावादी दार्शनिकों का कहना है कि जीव तथा भगवान् अभिन्न हैं, अतएव वे जीव के रूपान्तर की समता भगवान् के रूपान्तर से करते हैं। दूसरे शब्दों में, मायावादी कहते हैं कि यदि जीव प्रसन्न रहता है, तो भगवान् भी प्रसन्न रहते हैं और यदि जीव अप्रसन्न रहता है, तो भगवान् भी अप्रसन्न रहते हैं। इस प्रकार शब्दाडम्बर द्वारा मायावादी यह सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि जीव

तथा भगवान् में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु यह सही नहीं है। इस श्लोक में कृष्णदास कविराज गोस्वामी बतलाते हैं—*प्रभु-गुणे भृत्य विकल प्रभु भृत्यगुणे।* भगवान् तथा जीव समान नहीं हैं, क्योंकि भगवान् सदैव स्वामी होते हैं और जीव सदैव दास होता है। रूपान्तर तो दिव्य गुणों के कारण होता है। यही कारण है कि ऐसा कहा जाता है कि भगवान् का दास तो भगवान् का हृदय होता है और दास का हृदय भगवान् होते हैं। इसकी व्याख्या भगवान् कृष्ण द्वारा *भगवद्गीता* (४.११) में भी की गई है :

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥

"जो जिस प्रकार से मेरी शरण में आते हैं, उन्हें मैं उसी तरह से पुरस्कार देता हूँ। हे पृथा-पुत्र, हर व्यक्ति सभी तरह से मेरे ही पथ का अनुगमन करता है।"

भगवान् अपने दास को उसके दिव्य गुण के लिए बधाई देने के लिए सदैव उत्सुक रहते हैं। दास आनन्द से भगवान् की सेवा करता है, और भगवान् हैं कि वे प्रसन्न होकर दास से भी अधिक सेवा करने के लिए उत्सुक रहते हैं।

হরিদাস কহে,—প্রভু, না ছুঁড়িও মোরে ।
মুঞি—নীচ, অস্পৃশ্য, পরম পামরে ॥ ১৮৮॥

हरिदास कहे,—प्रभु, ना छुडिओ मोरे ।
मुञि—नीच, अस्पृश्य, परम पामरे ॥ १८८॥

हरिदास कहे—ठाकुर हरिदास ने कहा; **प्रभु**—मेरे प्रिय प्रभु; **ना छुडिओ मोरे**—कृपया मुझे मत छूएँ; **मुञि**—मैं; **नीच**—सब से नीच; **अस्पृश्य**—अछूत; **परम पामरे**—निम्नतम मनुष्य।

अनुवाद

हरिदास ठाकुर ने कहा, "हे प्रभु, कृपया आप मुझे न छुएँ, क्योंकि मैं अत्यन्त पतित, अछूत तथा मनुष्यों में सबसे नीच हूँ।

প্রভু কহে,—তোমা স্পর্শি পবিত্র হইতে ।
তোমার পবিত্র ধর্ম নাহিক আমাতে ॥ ১৮৯॥

प्रभु कहे,—तोमा स्पर्शि पवित्र हइते ।
तोमार पवित्र धर्म नाहिक आमाते ॥ १८९ ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **तोमा स्पर्शि**—मैं तुम्हें छूता हूँ; **पवित्र हइते**—पवित्र होने के लिए; **तोमार**—तुम्हारा; **पवित्र**—पवित्र; **धर्म**—कार्यकलाप; **नाहिक**—नहीं है; **आमाते**—मुझमें।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "मैं तो पवित्र बनने के लिए तुम्हारा स्पर्श करना चाहता हूँ, क्योंकि तुम्हारे जैसे पवित्र कर्म मुझ में नहीं हैं।"

तात्पर्य

यह स्वामी तथा दास के बीच भावों के आदान-प्रदान का उदाहरण है। दास सोचता है कि वह बहुत अपवित्र है, अतएव स्वामी द्वारा स्पर्श करने योग्य नहीं है, किन्तु स्वामी सोचता है कि चूँकि वह अनेकानेक अशुद्ध जीवों की संगति करने से अपवित्र हो चुका है, अतएव उसे अपने आपको शुद्ध करने के लिए हरिदास ठाकुर जैसे शुद्ध भक्त का स्पर्श करना चाहिए। वास्तव में दास तथा स्वामी दोनों पहले से शुद्ध होते हैं, क्योंकि दोनों में से कोई भी भौतिक संसार की अशुद्धियों के सम्पर्क में नहीं रहता। वे दोनों गुण में समान होते हैं, क्योंकि दोनों ही परम शुद्ध होते हैं। हाँ, गुण की मात्रा में अन्तर अवश्य होता है, क्योंकि स्वामी असीम होता है और दास सीमित। फलतः दास सदैव स्वामी का आश्रित रहता है और यह सम्बन्ध सनातन तथा निर्विघ्न होता है। किन्तु ज्योंही दास स्वामी बनने की चेष्टा करना चाहता है, त्योंही वह *माया* में जा गिरता है। इस तरह अपनी स्वच्छन्द इच्छा के दुरुपयोग से ही मनुष्य माया के प्रभाव में आ जाता है।

मायावादी दार्शनिक स्वामी तथा दास की समता की व्याख्या मात्रा के सन्दर्भ में करने का प्रयास करते हैं, किन्तु वे यह नहीं बतला पाते कि यदि स्वामी तथा दास समान हैं, तो दास माया का शिकार क्यों होता है। वे यह बतलाने का प्रयत्न करते हैं कि जब यह दासरूपी जीव माया के चंगुल से छूटता है, तो वह फिर से तुरन्त तथाकथित स्वामी बन जाता है। ऐसी व्याख्या कभी भी सन्तोषजनक नहीं हो सकती। असीम होने के कारण स्वामी कभी भी माया

का शिकार नहीं बन सकता, क्योंकि तब उसकी असीमता सीमित या पंगु हो जायेगी। इस तरह मायावादी व्याख्या सही नहीं है। सच तो यह है कि स्वामी सदा स्वामी ही रहता है और असीम होता है और दास सीमित होने के कारण कभी-कभी माया के प्रभाव से पंगु बन जाता है। माया भी स्वामी की शक्ति है और वह भी असीम है। अत: सीमित दास या सीमित जीव, स्वामी या स्वामी की शक्ति माया के अन्तर्गत रहने के लिए बाध्य होता है। माया के प्रभाव से छूटते ही मनुष्य पुन: शुद्ध भक्त बन सकता है और गुण में भगवान् के समान हो सकता है। स्वामी तथा दास का यह सम्बन्ध उनके असीम तथा सीमित होने के कारण चलता रहता है।

ক্ষণে ক্ষণে কর তুমি সর্ব-তীর্থে স্নান ।
ক্ষণে ক্ষণে কর তুমি যজ্ঞ-তপো-দান ॥ ১৯০ ॥

क्षणे क्षणे कर तुमि सर्व-तीर्थे स्नान ।
क्षणे क्षणे कर तुमि यज्ञ-तपो-दान ॥ १९० ॥

क्षणे क्षणे—प्रतिक्षण; **कर**—करते हो; **तुमि**—तुम; **सर्व-तीर्थे स्नान**—सभी तीर्थ स्थानों में स्नान; **क्षणे क्षणे**—प्रतिक्षण; **कर**—करते हो; **तुमि**—तुम; **यज्ञ**—यज्ञ; **तप:**—तपस्या; **दान**—दान।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर की प्रशंसा करते हुए कहा, "तुम प्रतिक्षण सारे तीर्थस्थानों में स्नान करते हो और प्रतिक्षण यज्ञ, तप तथा दान करते रहते हो।

নিরন্তর কর চারি বেদ অধ্যয়ন ।
দ্বিজ-ন্যাসী হৈতে তুমি পরম-পাবন ॥ ১৯১ ॥

निरन्तर कर चारि वेद अध्ययन ।
द्विज-न्यासी हैते तुमि परम-पावन ॥ १९१ ॥

निरन्तर—सदैव; **कर**—तुम करते हो; **चारि**—चारों; **वेद**—वेदों का; **अध्ययन**—अध्ययन; **द्विज**—ब्राह्मण; **न्यासी**—संन्यासी; **हैते**—की अपेक्षा; **तुमि**—तुम; **परम-पावन**—परम पावन।

अनुवाद

"तुम तो निरन्तर चारों वेदों का अध्ययन करते हो और किसी भी ब्राह्मण या संन्यासी से बढ़कर हो।"

अहो वत श्व-पचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या
ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥ १९२॥

अहो बत श्व-पचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या
ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥ १९२॥

अहो बत—यह कितना आश्चर्यजनक है; **श्व-पचः**—कुत्ता खाने वाला; **अतः**—दीक्षित ब्राह्मणों की अपेक्षा; **गरीयान्**—अधिक महिमावान; **यत्**—जिसकी; **जिह्वा-अग्रे**—जिह्वा पर; **वर्तते**—रहता है; **नाम**—पावन नाम; **तुभ्यम्**—आपका, मेरे प्रभु; **तेपुः**—सम्पन्न की है; **तपः**—तपस्या; **ते**—वे; **जुहुवुः**—यज्ञ किये हैं; **सस्नुः**—सभी तीर्थस्थानों में स्नान किया; **आर्याः**—वास्तविक आर्य जाति वाले; **ब्रह्म**—सभी वेद; **अनूचुः**—पढ़े हैं; **नाम**—पावन नाम; **गृणन्ति**—जपते हैं; **ये**—जो; **ते**—वे।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह श्लोक सुनाया, "'हे प्रभु, जो व्यक्ति आपके पवित्र नाम को अपनी जीभ पर सदैव रखता है, वह दीक्षित ब्राह्मण से बढ़कर बन जाता है। भले ही वह चंडाल परिवार में उत्पन्न हुआ हो और इस कारण से भौतिक दृष्टि में अत्यन्त नीच क्यों न माना जाये, तो भी वह प्रशंसनीय है। यह भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन का अद्भुत प्रभाव है। अतएव निष्कर्ष यह निकालना चाहिए कि जो व्यक्ति भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करता है, समझ लो कि उसने वेदों में वर्णित सारे तप तथा यज्ञ सम्पन्न कर लिए; उसने सारे तीर्थस्थानों में स्नान कर लिया है; उसने सारे वेदों का अध्ययन कर लिया है और वह वास्तव में आर्य है।'"

तात्पर्य

आर्य शब्द का अर्थ है उन्नत। जब तक कोई आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत न हो, तब तक वह आर्य नहीं कहला सकता। यही आर्य तथा अनार्य में अन्तर है। अनार्य वे हैं, जो आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत नहीं हैं। वैदिक संस्कृति का पालन करने, यज्ञ करने तथा वैदिक आदेशों का दृढ़ता से पालन करने से मनुष्य ब्राह्मण, संन्यासी या आर्य बन सकता है। समुचित योग्यता प्राप्त किये बिना ब्राह्मण, संन्यासी या आर्य बनना सम्भव नहीं है। *भागवत धर्म* किसी को सस्ता ब्राह्मण, संन्यासी या आर्य बनने की अनुमति नहीं देता। यहाँ पर वर्णित गुण या योग्यताएँ *श्रीमद्भागवत* (३.३३.७) से उद्धृत हैं, जिन्हें कपिल देव की माता देवहूति ने तब बतलाया था, जब वे भक्तियोग के प्रभाव को भलीभाँति समझ गई थीं। इस तरह देवहूति ने भक्त की चतुर्दिक् महानता का संकेत करते हुए भक्त की प्रशंसा की है।

এত বলি তাঁরে লঞা গেলা পুষ্পোদ্যানে ।
অতি নিভৃতে তাঁরে দিলা বাসা-স্থানে ॥ ১৯৩ ॥

এত বলি তাঁরে লঞা গেলা পুষ্পোদ্যানে ।
অতি নিভৃতে তাঁরে দিলা বাসা-স্থানে ॥ ১৯৩ ॥

এত বলি—यह कहकर; **তাঁরে লঞা**—उनको लेकर; **গেলা**—गये; **পুষ্প-উদ্যানে**—पुष्प उद्यान में; **অতি নিভৃতে**—एक अत्यन्त एकान्त स्थान में; **তাঁরে**—उनको; **দিলা**—दिया; **বাসা-স্থানে**—रहने का स्थान।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु हरिदास ठाकुर को फूल के बगीचे के भीतर ले गये और वहीं एक अत्यन्त एकान्त स्थान में उनको रहने के लिए निवासस्थान दे दिया।

এই-স্থানে রহি' কর নাম সঙ্কীর্তন ।
প্রতি-দিন আসি' আমি করিব মিলন ॥ ১৯৪ ॥

এই-স্থানে রহি' কর নাম সঙ্কীর্তন ।
প্রতি-দিন আসি' আমি করিব মিলন ॥ ১৯৪ ॥

एइ-स्थाने—इस स्थान पर; **रहि'**—रहकर; **कर**—करो; **नाम सङ्कीर्तन**—नाम संकीर्तन; **प्रति-दिन**—प्रति दिन; **आसि'**—आकर; **आमि**—मैं; **करिब**—करूँगा; **मिलन**—मिलन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर से निवेदन किया, "तुम यहीं पर रहो और हरे कृष्ण महामन्त्र का जप करो। मैं प्रतिदिन यहीं तुमसे मिलने आता रहूँगा।

मन्दिरेर चक्र देखि' करिह प्रणाम ।
एई ठाञि तोमार आसिबे प्रसादान्न ॥१९५॥

मन्दिरेर चक्र देखि' करिह प्रणाम ।
एइ ठाञि तोमार आसिबे प्रसादान्न ॥ १९५ ॥

मन्दिरेर—जगन्नाथ मन्दिर; **चक्र**—शिखिर के चक्र को; **देखि'**—देखकर; **करिह प्रणाम**—प्रणाम करो; **एइ ठाञि**—इस स्थान पर; **तोमार**—तुम्हारा; **आसिबे**—आयेगा; **प्रसाद-अन्न**—प्रसाद।

अनुवाद

"तुम यहीं शान्तिपूर्वक रहो और मन्दिर के शिखर पर लगे चक्र को देखकर नमस्कार किया करो। जहाँ तक तुम्हारे प्रसाद की बात है, मैं उसे तुम्हारे पास भेजे जाने की व्यवस्था करा दूँगा।"

तात्पर्य

श्रील हरिदास ठाकुर मुसलमान परिवार में उत्पन्न हुए थे, अतएव मन्दिर प्रतिबन्धों के अनुसार वे जगन्नाथजी के मन्दिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे। तो भी श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें नामाचार्य हरिदास ठाकुर के रूप में मान्यता दी। इतने पर भी हरिदास ठाकुर अपने आपको जगन्नाथ मन्दिर में प्रवेश करने के लिए अयोग्य मानते रहे। यदि श्री चैतन्य महाप्रभु चाहते तो उन्हें स्वयं अपने साथ जगन्नाथ मन्दिर के भीतर ले जा सकते थे, किन्तु उन्होंने लोकप्रचलित प्रथा को तोड़ना नहीं चाहा। इसलिए उन्होंने अपने दास से कहा कि वह मन्दिर के शिखर पर बने विष्णुचक्र को देखे और नमस्कार करे। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि किसी को मन्दिर में प्रविष्ट होने नहीं दिया जाता या कोई अपने

आपको मन्दिर में प्रवेश करने के लिए अयोग्य समझता है, तो वह मन्दिर के बाहर से चक्र का दर्शन कर सकता है। यह भीतर के अर्चाविग्रह के दर्शन जैसा ही है।

श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रील हरिदास ठाकुर के पास प्रतिदिन जाने का वादा किया, जिससे सूचित होता है कि भले ही उन्हें मन्दिर में प्रवेश करने के लिए अयोग्य माना जाता रहा हो, वे आध्यात्मिक जीवन में अत्यन्त उन्नत थे, जिसके कारण महाप्रभु उनके पास नित्यप्रति जाते थे। न ही उन्हें अपना भोजन माँगने के लिए अपने निवासस्थान से बाहर जाने की आवश्यकता थी। श्री चैतन्य महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर को आश्वस्त किया कि उनके पास प्रसाद आता रहेगा। जैसाकि *भगवद्गीता* (९.२२) में कहा गया है *योगक्षेमं वहाम्यहम्*— "मैं अपने भक्तों की सारी आवश्यकताओं का प्रबन्ध करता हूँ।"

यहाँ पर एक संकेत उन लोगों के लिए भी किया गया है, जो कृत्रिम रीति से ठाकुर हरिदास के आचरण की नकल करना चाहते हैं। ऐसी जीवन-शैली ग्रहण करने के पूर्व मनुष्य को श्री चैतन्य महाप्रभु या उनके प्रतिनिधि की अनुमति लेनी आवश्यक है। महाप्रभु के शुद्ध भक्त या दास का कर्तव्य है कि वह महाप्रभु के आदेश का पालन करे। श्री चैतन्य महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु से बंगाल जाकर प्रचार करने के लिए कहा, तथा रूप और सनातन गोस्वामियों को वृन्दावन जाकर खोये हुए तीर्थस्थलों का पुनरुद्धार करने के लिए कहा। यहाँ पर महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर से जगन्नाथ पुरी में ही रहकर भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करते रहने के लिए कहा। इस तरह चैतन्य महाप्रभु ने विभिन्न व्यक्तियों को भिन्न-भिन्न आदेश दिये; अतएव किसी को श्री चैतन्य महाप्रभु या उनके प्रतिनिधि की आज्ञा प्राप्त किये बिना हरिदास ठाकुर के आचरण का अनुकरण नहीं करना चाहिए। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने ऐसी नकल की निम्न प्रकार से भर्त्सना की है :

दुष्ट मन! तुमि किसेर वैष्णव?
प्रतिष्ठार तरे, निर्जनेर घरे
तव हरिनाम केवल कैतव

"मेरे मन, तुम हरिदास ठाकुर की नकल करके एकान्त स्थान में हरे कृष्ण मन्त्र

का कीर्तन करना चाहते हो, किन्तु तुम वैष्णव कहलाने योग्य नहीं हो, क्योंकि तुम तो सस्ती ख्याति चाहते हो, तुम्हें हरिदास ठाकुर के वास्तविक गुण नहीं चाहिए। यदि तुम उनकी नकल करने का प्रयास करोगे, तो तुम पतित हो जाओगे, क्योंकि कनिष्ठ अवस्था के कारण तुम स्त्रियों तथा धन के विषय में सोचोगे। इस तरह तुम माया के चंगुल में पड़ जाओगे और एकान्त स्थान में तुम्हारा तथाकथित कीर्तन तुम्हारे पतन का कारण बन जायेगा।"

नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर, मुकुन्द ।
हरिदासे मिलि' सबे पाइल आनन्द ॥ १९६॥

नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर, मुकुन्द ।
हरिदासे मिलि' सबे पाइल आनन्द ॥ १९६ ॥

नित्यानन्द—नित्यानन्द प्रभु; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **दामोदर**—दामोदर; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **हरिदासे**—हरिदास से; **मिलि'**—मिलकर; **सबे**—वे सब; **पाइल**—हुए; **आनन्द**—अत्यन्त प्रसन्न।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु, जगदानन्द प्रभु, दामोदर प्रभु तथा मुकुन्द प्रभु हरिदास ठाकुर से मिलकर अत्यन्त आनन्दित हुए।

समुद्र-स्नान करि' प्रभु आइला निज स्थाने ।
अद्वैतादि गेला सिन्धु करिबारे स्नाने ॥ १९७॥

समुद्र-स्नान करि' प्रभु आइला निज स्थाने ।
अद्वैतादि गेला सिन्धु करिबारे स्नाने ॥ १९७॥

समुद्र-स्नान करि'—समुद्र में स्नान करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **आइला**—आये; **निज स्थाने**—अपने स्थान पर; **अद्वैत-आदि**—अद्वैत प्रभु आदि भक्तगण; **गेला**—गये; **सिन्धु**—समुद्र पर; **करिबारे**—करने; **स्नाने**—स्नान।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु समुद्र-स्नान करके अपने निवासस्थान वापस आ गये, तो अद्वैत प्रभु इत्यादि सारे भक्त समुद्र में स्नान करने गये।

আসি' জগন্নাথের কৈল চূড়া দরশন ।
প্রভুর আবাসে আইলা করিতে ভোজন ॥ ১৯৮ ॥

আসি' জগন্নাথের কৈল চূড়া দরশন ।
প্রভুর আবাসে আইলা করিতে ভোজন ॥ ১৯৮ ॥

আসি'—লौटकर; **জগন্নাথের**—भगवान् जगन्नाथ का; **কৈল**—किया; **চূড়া দরশন**—मन्दिर शिखिर (चूड़ा) के दर्शन करके; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **আবাসে**—निवासस्थान पर; **আইলা**—आये; **করিতে ভোজন**—भोजन करने के लिए।

অনুবাদ

समुद्र-स्नान करने के बाद अद्वैत प्रभु समेत सारे भक्त लौट आये और उन्होंने लौटते समय जगन्नाथ मन्दिर की चोटी का दर्शन किया। इसके बाद वे भोजन करने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु के निवासस्थान गये।

সবারে বসাইলা প্রভু যোগ্য ক্রম করি' ।
শ্রী-হস্তে পরিবেশন কৈল গৌরহরি ॥ ১৯৯ ॥

সবারে বসাইলা প্রভু যোগ্য ক্রম করি' ।
শ্রী-হস্তে পরিবেশন কৈল গৌরহরি ॥ ১৯৯ ॥

সবারে—सभी भक्तों को; **বসাইলা**—बैठाया; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **যোগ্য**—उचित; **ক্রম**—क्रम में, एक के बाद दूसरे को; **করি'**—करके; **শ্রী-হস্তে**—अपने दिव्य हाथ से; **পরিবেশন**—वितरण; **কৈল**—किया; **গৌরহরি**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने।

অনুবাদ

श्री चैतन्य महाप्रभु ने एक-एक करके सारे भक्तों को उनके उचित स्थान पर बैठाया। फिर उन्होंने अपने दिव्य हाथ से प्रसाद-वितरण करना शुरू किया।

অল্প অন্ন নাহি আইসে দিতে প্রভুর হাতে ।
দুই-তিনের অন্ন দেন এক এক পাতে ॥ ২০০ ॥

অল্প অন্ন নাহি আইসে দিতে প্রভুর হাতে ।
দুই-তিনের অন্ন দেন এক এক পাতে ॥ ২০০ ॥

अल्प अन्न—थोड़ा प्रसाद; **नाहि**—नहीं; **आइसे**—आता; **दिते**—देने के लिए; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **हाते**—हाथ में; **दुइ**—दो; **तिनेर**—अथवा तीन; **अन्न**—अन्न; **देन**—उन्होंने दिया; **एक एक पाते**—केले के प्रत्येक पत्र में।

अनुवाद

सारे भक्तों को केले के पत्तों में प्रसाद परोसा गया और श्री चैतन्य महाप्रभु ने हर पत्ते पर इतनी मात्रा परोसी जो दो-तीन व्यक्तियों के लिए पर्याप्त थी, क्योंकि उनके हाथ इससे कम नहीं बाँट सकते थे।

प्रभु ना खाइले केह ना करे भोजन ।
ऊर्ध्व-हस्ते वसि' रहे सर्व भक्त-गण ॥ २०१ ॥

प्रभु ना खाइले केह ना करे भोजन ।
ऊर्ध्व-हस्ते वसि' रहे सर्व भक्त-गण ॥ २०१ ॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **ना खाइले**—खाये बिना; **केह**—कोई; **ना**—नहीं; **करे**—करता; **भोजन**—भोजन; **ऊर्ध्व-हस्ते**—हाथ को ऊपर उठाकर; **वसि'**—बैठे; **रहे**—रहे; **सर्व**—सभी; **भक्त-गण**—भक्तगण।

अनुवाद

सारे भक्त अपने-अपने हाथ परोसे हुए प्रसाद के ऊपर उठाये रहे, क्योंकि वे महाप्रभु को पहले खाते हुए देखे बिना खाना नहीं चाह रहे थे।

स्वरूप-गोसाञि प्रभुके कैल निवेदन ।
तुमि ना वसिले केह ना करे भोजन ॥ २०२ ॥

स्वरूप-गोसाञि प्रभुके कैल निवेदन ।
तुमि ना वसिले केह ना करे भोजन ॥ २०२ ॥

स्वरूप-गोसाञि—स्वरूप दामोदर गोसांइ ने; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कैल**—किया; **निवेदन**—निवेदन; **तुमि**—आप; **ना वसिले**—यदि नहीं बैठेंगे; **केह**—कोई; **ना**—नहीं; **करे**—करेगा; **भोजन**—भोजन।

अनुवाद

तब स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु को सूचित किया,

"जब तक आप बैठेंगे नहीं और प्रसाद नहीं ग्रहण करेंगे, तब तक कोई भोजन नहीं करेगा।

তোমা-সঙ্গে রহে যত সন্ন্যাসীর গণ ।
গোপীনাথাচার্য তাঁরে করিয়াছে নিমন্ত্রণ ॥২০৩॥

তোমা-সঙ্গে রহে যত সন্ন্যাসীর গণ ।
গোপীনাথাচার্য্য তাঁরে করিয়াছে নিমন্ত্রণ ॥২০৩॥

तोमा-सङ्गे—आपके साथ; **रहे**—रहते हैं; **यत**—जितने; **सन्न्यासीर गण**—संन्यासी; **गोपीनाथ-आचार्य्य**—गोपीनाथ आचार्य; **ताँरे**—उन सबको; **करियाछे**—किया है; **निमन्त्रण**—निमंत्रण।

अनुवाद

"गोपीनाथ आचार्य ने उन सारे संन्यासियों को आने और प्रसाद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित किया है, जो आपके साथ रहते हैं।

আচার্য আসিয়াছেন ভিক্ষার প্রসাদান্ন লঞা ।
পুরী, ভারতী আছেন তোমার অপেক্ষা করিয়া ॥২০৪॥

আচার্য্য আসিয়াছেন ভিক্ষার প্রসাদান্ন লঞা ।
পুরী, ভারতী আছেন তোমার অপেক্ষা করিয়া ॥২০৪॥

आचार्य्य—गोपीनाथ आचार्य; **आसियाछेन**—आ गये हैं; **भिक्षार**—भोजन करने के लिए; **प्रसाद-अन्न लञा**—प्रसाद लेकर; **पुरी**—परमानन्द पुरी; **भारती**—ब्रह्मानन्द भारती; **आछेन**—हैं; **तोमार**—आपकी; **अपेक्षा करिया**—प्रतीक्षा कर रहे।

अनुवाद

"गोपीनाथ आचार्य सारे संन्यासियों को बाँटने के लिए पर्याप्त प्रसाद लेकर पहले ही आ चुके हैं और परमान्द पुरी तथा ब्रह्मानन्द भारती जैसे संन्यासी आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

নিত্যানন্দ লঞা ভিক্ষা করিতে বৈস তুমি ।
বৈষ্ণবের পরিবেশন করিতেছি আমি ॥২০৫॥

नित्यानन्द लञा भिक्षा करिते वैस तुमि ।
वैष्णवेर परिवेशन करितेछि आमि ॥ २०५ ॥

नित्यानन्द लञा—श्री नित्यानन्द प्रभु को साथ लेकर; **भिक्षा**—भोजन; **करिते**—लेने; **वैस**—बैठ जाओ; **तुमि**—आप; **वैष्णवेर**—सभी वैष्णव भक्तों को; **परिवेशन**—प्रसाद वितरण; **करितेछि**—कर रहा हूँ; **आमि**—मैं।

अनुवाद

"आप बैठ जाएँ और नित्यानन्द प्रभु के साथ भोजन करें। मैं प्रसाद सारे वैष्णवों को वितरित कर दूँगा।"

তবে প্রভু প্রসাদান্ন গোবিন্দ-হাতে দিলা ।
যত্ন করি' হরিদাস-ঠাকুরে পাঠাইলা ॥২০৬॥

तबे प्रभु प्रसादान्न गोविन्द-हाते दिला ।
यत्न करि' हरिदास-ठाकुरे पाठाइला ॥ २०६ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **प्रसाद-अन्न**—प्रसाद; **गोविन्द-हाते**—गोविन्द के हाथ में; **दिला**—दे दिया; **यत्न करि'**—बड़ी सावधानी से; **हरिदास-ठाकुरे**—हरिदास ठाकुर को; **पाठाइला**—भेजा।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने कुछ प्रसाद गोविन्द के हाथों में हरिदास ठाकुर को भेजे जाने के लिए लाकर दिया।

আপনে বসিলা সব সন্ন্যাসীরে লঞা ।
পরিবেশন করে আচার্য হরষিত হঞা ॥২০৭॥

आपने वसिला सब सन्न्यासीरे लञा ।
परिवेशन करे आचार्य्य हरषित हञा ॥ २०७ ॥

आपने—स्वयं; **वसिला**—बैठ गये; **सब**—सब; **सन्न्यासीरे लञा**—सभी संन्यासियों को अपने साथ लेकर; **परिवेशन करे**—वितरण किया; **आचार्य्य**—गोपीनाथ आचार्य; **हरषित हञा**—आनन्द के साथ।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु अन्य संन्यासियों के साथ भोजन करने बैठ

गये और गोपीनाथ आचार्य बड़े ही हर्ष के साथ प्रसाद का वितरण करने लगे।

স্বরূপ গোসাঞি, দামোদর, জগদানন্দ ।
বৈষ্ণবেরে পরিবেশে তিন জনে——আনন্দ ॥২০৮॥

स्वरूप गोसाञि, दामोदर, जगदानन्द ।
वैष्णवेरे परिवेशे तिन जने——आनन्द ॥ २०८॥

स्वरूप गोसाञि—स्वरूप गोसांइ; **दामोदर**—दामोदर; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **वैष्णवेरे परिवेशे**—वैष्णवों को बाँटा; **तिन जने**—तीन व्यक्तियों ने; **आनन्द**—हर्षपूर्वक।

अनुवाद

इसके बाद स्वरूप दामोदर गोस्वामी, दामोदर पण्डित तथा जगदानन्द ने बड़े हर्ष से भक्तों को प्रसाद बाँटा।

নানা পিঠা-পানা খায় আকণ্ঠ পূরিয়া ।
মধ্যে মধ্যে 'হরি' কহে আনন্দিত হঞা ॥২০৯॥

नाना पिठा-पाना खाय आकण्ठ पूरिया ।
मध्ये मध्ये 'हरि' कहे आनन्दित हञा ॥ २०९॥

नाना—नाना; **पिठा-पाना**—मिठाईयाँ और खीर; **खाय**—खाई; **आ-कण्ठ पूरिया**—पेट भरकर; **मध्ये मध्ये**—बीच में कभी-कभी; **हरि**—कृष्ण का पावन नाम; **कहे**—वे कहने लगे; **आनन्दित हञा**—आनन्दित होकर।

अनुवाद

उन्होंने हर तरह की मिठाईयाँ तथा खीर भरपेट खाई और बीच-बीच में हर्षित होकर 'हरि' के पवित्र नाम का उच्चारण किया।

तात्पर्य

प्रसाद खाते समय बीच बीच में भगवान् हरि का नामोच्चारण करने की वैष्णवों में प्रथा है। साथ ही वे *शरीर अविद्याजाल* जैसे गीत भी गाते हैं। जो लोग प्रसाद ग्रहण करते हैं, उन्हें सदा स्मरण रखना चाहिए कि प्रसाद सामान्य भोजन नहीं है। प्रसाद दिव्य होता है। अत: हमें स्मरण रखना चाहिए :

महाप्रसादे गोविन्दे नामब्रह्मणि वैष्णवे।
स्वल्पपुण्यवतां राजन् विश्वासो नैव जायते॥

जो लोग पुण्यशाली नहीं हैं, वे महाप्रसाद तथा भगवान् के पवित्र नाम का महत्त्व नहीं समझ सकते। प्रसाद तथा भगवन्नाम दोनों ही ब्रह्म अर्थात् आध्यात्मिक पद पर होते हैं। प्रसाद को कभी-भी होटल के भोजन की तरह नहीं समझना चाहिए। साथ ही अर्चाविग्रह को अर्पित नहीं किये गये भोजन को छूना तक नहीं चाहिए। प्रत्येक वैष्णव इस नियम का दृढ़ता से पालन करता है और प्रसाद के अतिरिक्त कोई अन्य भोजन ग्रहण नहीं करता है। मनुष्य को प्रसाद श्रद्धापूर्वक ग्रहण करना चाहिए, भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करना चाहिए और मन्दिर में अर्चाविग्रह की पूजा करनी चाहिए और हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि अर्चाविग्रह, महाप्रसाद तथा पवित्र भगवन्नाम भौतिक नहीं हैं। अर्चाविग्रह की पूजा करके, प्रसाद खाकर तथा हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करके मनुष्य सदैव आध्यात्मिक पद पर बना रह सकता है (*ब्रह्मभूयाय कल्पते*)।

ভোজন সমাপ্ত হৈল, কৈল আচমন ।
সবারে পরাইল প্রভু মাল্য-চন্দন ॥২১০॥

भोजन समाप्त हैल, कैल आचमन ।
सबारे पराइल प्रभु माल्य-चन्दन ॥२१०॥

भोजन—भोजन; **समाप्त**—समाप्त करके; **हैल**—हो गया; **कैल**—किया; **आचमन**—मुँह धोकर; **सबारे**—सब पर; **पराइल**—डाली; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **माल्य-चन्दन**—माला और चन्दन का लेप।

अनुवाद

जब सभी लोग खाकर अपने अपने हाथ-मुँह धो चुके, तो श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने हाथों से हर एक को फूल की माला तथा चन्दन-लेप से अलंकृत किया।

বিশ্রাম করিতে সবে নিজ বাসা গেলা ।
সন্ধ্যা-কালে আসি' পুনঃ প্রভুকে মিলিলা ॥২১১॥

विश्राम करिते सबे निज वासा गेला ।
सन्ध्या-काले आसि' पुनः प्रभुके मिलिला ॥ २११ ॥

विश्राम करिते—विश्राम के लिए; **सबे**—सभी वैष्णव; **निज**—अपने अपने; **वासा**—निवासस्थान; **गेला**—गये; **सन्ध्या-काले**—संध्या समय; **आसि'**—आकर; **पुनः**—पुनः; **प्रभुके मिलिला**—श्री चैतन्य महाप्रभु से मिले।

अनुवाद

इस प्रकार प्रसाद ग्रहण करने के बाद वे सब अपने-अपने वासस्थानों में विश्राम करने चले गये और संध्या समय वे फिर महाप्रभु से मिलने आये।

হেন-কালে রামানন্দ আইলা প্রভু-স্থানে ।
প্রভু মিলাইল তাঁরে সব বৈষ্ণব-গণে ॥২১২॥

हेन-काले रामानन्द आइला प्रभु-स्थाने ।
प्रभु मिलाइल ताँरे सब वैष्णव-गणे ॥ २१२ ॥

हेन-काले—इस समय; **रामानन्द**—रामानन्द; **आइला**—आये; **प्रभु-स्थाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मिलाइल**—मिलाया; **ताँरे**—उनको, (श्री रामानन्द राय); **सब**—सब; **वैष्णव-गणे**—भगवत्-भक्तों से।

अनुवाद

उसी समय रामानन्द राय भी श्री चैतन्य महाप्रभु से भेंट करने आये और महाप्रभु ने सभी वैष्णवों से उनका परिचय कराने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया।

সবা লঞা গেলা প্রভু জগন্নাথালয় ।
কীর্তন আরম্ভ তথা কৈল মহাশয় ॥২১৩॥

सबा लञा गेला प्रभु जगन्नाथालय ।
कीर्तन आरम्भ तथा कैल महाशय ॥ २१३ ॥

सबा लञा—उन सबको लेकर; **गेला**—गये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जगन्नाथ-आलय**—भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर; **कीर्तन**—कीर्तन; **आरम्भ**—आरम्भ; **तथा**—वहाँ; **कैल**—किया; **महाशय**—महाशय।

अनुवाद

तब महापुरुष श्री चैतन्य महाप्रभु उन सबको जगन्नाथ मन्दिर ले गये और वहाँ उन्होंने भगवान् के पवित्र नाम का संकीर्तन प्रारम्भ कर दिया।

সন্ধ্যা-ধূপ দেখি' আরম্ভিলা সঙ্কীর্তন ।
পড়িছা আসি' সবারে দিল মাল্য-চন্দন ॥২১৪॥

सन्ध्या-धूप देखि' आरम्भिला सङ्कीर्तन ।
पड़िछा आसि' सबारे दिल माल्य-चन्दन ॥ २१४॥

सन्ध्या-धूप—सायंकाल आरम्भ होने पर धूप आरती; **देखि'**—उन सबने देखी; **आरम्भिला**—शुरू किया; **सङ्कीर्तन**—संकीर्तन; **पड़िछा**—मन्दिर के निरीक्षक ने; **आसि'**—आकर; **सबारे**—प्रत्येक को; **दिल**—दिया; **माल्य-चन्दन**—पुष्पमालाएँ तथा चन्दन लेप।

अनुवाद

भगवान् की धूप-आरती देखने के बाद सबने संकीर्तन प्रारम्भ किया। तब पड़िछा (मन्दिर की देखभाल करने वाला) आया और उसने हर एक को फूलमाला तथा चन्दन-लेप दिया।

চারি-দিকে চারি সম্প্রদায় করেন কীর্তন ।
মধ্যে নৃত্য করে প্রভু শচীর নন্দন ॥২১৫॥

चारि-दिके चारि सम्प्रदाय करेन कीर्तन ।
मध्ये नृत्य करे प्रभु शचीर नन्दन ॥ २१५॥

चारि-दिके—चारों दिशाओं में; **चारि**—चार; **सम्प्रदाय**—टोलियाँ; **करेन**—किया; **कीर्तन**—संकीर्तन; **मध्ये**—मध्य में; **नृत्य करे**—नृत्य किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **शचीर नन्दन**—माता शची के पुत्र ने।

अनुवाद

चारों दिशाओं में संकीर्तन करने के लिए चार टोलियाँ बनायी गई और उन चारों के बीच में माता शची के पुत्र महाप्रभु स्वयं नृत्य करने लगे।

অষ্ট মৃদঙ্গ বাজে, বত্রিশ করতাল ।
হরি-ধ্বনি করে সবে, বলে—ভাল, ভাল ॥২১৬॥

अष्ट मृदङ्ग बाजे, बत्रिश करताल ।
हरि-ध्वनि करे सबे, बले—भाल, भाल ॥ २१६ ॥

अष्ट मृदङ्ग—आठ मृदंग; **बाजे**—बज उठी; **बत्रिश**—बत्तीस; **करताल**—करताल; **हरि-ध्वनि**—हरि की दिव्य ध्वनि; **करे**—करने लगे; **सबे**—उनमें से प्रत्येक ने; **बले**—कहा; **भाल भाल**—"बहुत अच्छा," "बहुत अच्छा"।

अनुवाद

चारों टोलियों के पास आठ मृदंग तथा बत्तीस करताल थे। वे सभी एकसाथ दिव्य ध्वनि करने लगे और हर व्यक्ति कहने लगा, "बहुत अच्छा! बहुत अच्छा!"

কীর্তনের ধ্বনি মহা-মঙ্গল উঠিল ।
চতুর্দশ লোক ভরি' ব্রহ্মাণ্ড ভেদিল ॥২১৭॥

कीर्तनेर ध्वनि महा-मङ्गल उठिल ।
चतुर्दश लोक भरि' ब्रह्माण्ड भेदिल ॥ २१७ ॥

कीर्तनेर ध्वनि—संकीर्तन की ध्वनि; **महा-मङ्गल उठिल**—शुभ भाग्य जाग पड़ा; **चतुर्दश**—चौदह; **लोक**—लोकों में; **भरि'**—भरकर; **ब्रह्माण्ड**—आखिल ब्रह्माण्ड; **भेदिल**—भेद दिया।

अनुवाद

जब संकीर्तन का कोलाहल गूँजने लगा, तो तुरन्त ही सारा सौभाग्य जाग उठा और यह ध्वनि चौदहों लोकों को पूरित करके ब्रह्माण्ड को भेद गई।

কীর্তন-আরম্ভে প্রেম উথলি' চলিল ।
নীলাচল-বাসী লোক ধাঞা আইল ॥২১৮॥

कीर्तन-आरम्भे प्रेम उथलि' चलिल ।
नीलाचल-वासी लोक धाञा आइल ॥ २१८ ॥

कीर्तन-आरम्भे—संकीर्तन के आरम्भ में; **प्रेम**—प्रेम; **उथलि'**—जोर से उठा; **चलिल**—बहने लगा; **नीलाचल-वासी**—जगन्नाथ पुरी के सभी निवासी; **लोक**—लोग; **धाञा**—दौड़कर; **आइल**—आ गये।

अनुवाद

जब संकीर्तन प्रारम्भ हुआ, तो तुरन्त प्रेम-भाव ने हर वस्तु को आप्लावित कर दिया और जगन्नाथ पुरी के सारे निवासी दौड़ते हुए आये।

कीर्तन देखि' सबार मने हैल चमत्कार ।
कभु नाहि देखि ऐछे प्रेमेर विकार ॥२१९॥
कीर्तन देखि' सबार मने हैल चमत्कार ।
कभु नाहि देखि ऐछे प्रेमेर विकार ॥ २१९॥

कीर्तन देखि'—संकीर्तन देखकर; **सबार**—सबके; **मने**—मन में; **हैल**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्य; **कभु**—कभी; **नाहि**—नहीं; **देखि**—देखा; **ऐछे**—ऐसा; **प्रेमेर**—प्रेमावेश का; **विकार**—प्रदर्शन।

अनुवाद

प्रत्येक व्यक्ति उस तरह संकीर्तन होते देखकर आश्चर्यचकित था। सबने स्वीकार किया कि इसके पूर्व कभी भी न तो ऐसा कीर्तन हुआ, न ईश्वर-प्रेम का ऐसा प्राकट्य हुआ।

तबे प्रभु जगन्नाथेर मन्दिर बेड़िया ।
प्रदक्षिण करि' बुलेन नर्तन करिया ॥२२०॥
तबे प्रभु जगन्नाथेर मन्दिर बेड़िया ।
प्रदक्षिण करि' बुलेन नर्तन करिया ॥ २२०॥

तबे—तत्पश्चात्; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ के; **मन्दिर**—मन्दिर; **बेड़िया**—चारों ओर; **प्रदक्षिण**—प्रदक्षिणा; **करि'**—करके; **बुलेन**—चलने लगे; **नर्तन करिया**—नृत्य करते हुए।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथ मन्दिर की प्रदक्षिणा की और पूरी प्रदक्षिणा-भर लगातार नाचते रहे।

आगे-पाछे गान करे चारि सम्प्रदाय ।
आछाड़ेर काले धरे नित्यानन्द राय ॥२२१॥

आगे-पाछे गान करे चारि सम्प्रदाय ।
आछाड़ेर काले धरे नित्यानन्द राय ॥ २२१ ॥

आगे-पाछे—आगे पीछे; **गान**—गाकर; **करे**—किया; **चारि**—चार; **सम्प्रदाय**—समूह; **आछाड़ेर**—गिरना; **काले**—उस समय; **धरे**—उठा लिया; **नित्यानन्द राय**—श्री नित्यानन्द प्रभु ने।

अनुवाद

जब प्रदक्षिणा की जा रही थी, तब चारों टोलियों ने आगे और पीछे कीर्तन किया। जब श्री चैतन्य महाप्रभु भूमि पर गिर पड़े, तो नित्यानन्द प्रभु ने उन्हें उठा लिया।

অশ্রু, পুলক, কম্প, স্বেদ, গম্ভীর হুঙ্কার ।
প্রেমের বিকার দেখি' লোকে চমত্কার ॥২২২॥

अश्रु, पुलक, कम्प, स्वेद, गम्भीर हुङ्कार ।
प्रेमेर विकार देखि' लोके चमत्कार ॥ २२२ ॥

अश्रु—अश्रु; **पुलक**—पुलक; **कम्प**—कम्पन; **स्वेद**—पसीना; **गम्भीर हुङ्कार**—गहरी गूंज; **प्रेमेर**—प्रेमावेश का; **विकार**—रूपांतर; **देखि'**—देखकर; **लोके**—सारे लोग; **चमत्कार**—चकित हो गये।

अनुवाद

जब कीर्तन चल रहा था, तब श्री चैतन्य महाप्रभु के शरीर में प्रेम-विकार उत्पन्न हुए—यथा अश्रु, हर्ष, कम्पन, प्रस्वेद तथा गम्भीर हुंकार। इन विकारों को देखकर वहाँ पर उपस्थित सारे लोग अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए।

পিচ্কারি-ধারা জিনি' অশ্রু নয়নে ।
চারি-দিকের লোক সব করয়ে সিনানে ॥২২৩॥

पिच्कारि-धारा जिनि' अश्रु नयने ।
चारि-दिकेर लोक सब करये सिनाने ॥ २२३ ॥

पिच्कारि-धारा—पिचकारी की भाँति जोर से पानी की धारा; **जिनि'**—जीतकर; **अश्रु**—

अश्रु; **नयने**—आँखों में; **चारि-दिकेर**—चारों दिशाओं में; **लोक**—लोग; **सब**—सब; **करये सिनाने**—गीले हो गये।

अनुवाद

महाप्रभु के नेत्रों से अश्रु की धारा तेजी से निकल पड़ी, मानो पिचकारी से पानी निकल रहा हो। उनके चारों ओर खड़े लोग उनके अश्रुओं से भीग गये।

'बेड़ा-नृत्य' महाप्रभु करि' कत-क्षण ।
मन्दिरेर पाछे रहि' करये कीर्तन ॥ २२४॥

'बेड़ा-नृत्य' महाप्रभु करि' कत-क्षण ।
मन्दिरेर पाछे रहि' करये कीर्तन ॥ २२४॥

बेड़ा-नृत्य—मन्दिर के चारों ओर नृत्य करके; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करि'**—किया ; **कत-क्षण**—कुछ समय के लिए; **मन्दिरेर पाछे**—मन्दिर के पीछे; **रहि'**—रुककर; **करये**—किया; **कीर्तन**—संकीर्तन।

अनुवाद

मन्दिर की प्रदक्षिणा करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु कुछ समय तक मन्दिर के पीछे रहे और उन्होंने अपना संकीर्तन जारी रखा।

चारि-दिके चारि सम्प्रदाय उच्चैःस्वरे गाय ।
मध्ये ताण्डव-नृत्य करे गौरराय ॥ २२५॥

चारि-दिके चारि सम्प्रदाय उच्चैः-स्वरे गाय ।
मध्ये ताण्डव-नृत्य करे गौरराय ॥ २२५॥

चारि-दिके—चारों ओर; **चारि सम्प्रदाय**—चारों समूहों ने; **उच्चैः-स्वरे**—बहुत ऊँची आवाज में; **गाय**—गाया; **मध्ये**—मध्य में; **ताण्डव-नृत्य**—कूदना और नाचना; **करे**—किया; **गौरराय**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने।

अनुवाद

चारों दिशाओं में चारों संकीर्तन टोलियाँ जोर-जोर से कीर्तन कर रही थीं और श्री चैतन्य महाप्रभु बीच में ऊँचे उछल-उछलकर नाच रहे थे।

বহু-ক্ষণ নৃত্য করি' প্রভু স্থির হৈলা ।
চারি মহান্তেরে তবে নাচিতে আজ্ঞা দিলা ॥২২৬॥

বহু-ক্ষণ নৃত্য করি' প্রভু স্থির হৈলা ।
চারি মহান্তেরে তবে নাচিতে আজ্ঞা দিলা ॥ ২২৬ ॥

বহু-ক্ষণ—লম্বে সময় তক; **নৃত্য করি'**—নৃত্য করকে; **প্রভু**—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু; **স্থির হৈলা**—স্থির হুए; **চারি মহান্তেরে**—চার মহান্ পুরুষোঁ কো; **তবে**—তব; **নাচিতে**—নাচনে কী; **আজ্ঞা দিলা**—আজ্ঞা দী।

অনুবাদ

লম্বে সময তক নাচনে কে বাদ শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু স্থির হো গযে ঔর উন্হোংনে চার মহাপুরুষোং কো নৃত্য শুরূ করনে কা আদেশ দিযা।

এক সম্প্রদায়ে নাচে নিত্যানন্দ-রায়ে ।
অদ্বৈত-আচার্য নাচে আর সম্প্রদায়ে ॥২২৭॥

এক সম্প্রদায়ে নাচে নিত্যানন্দ-রায়ে ।
অদ্বৈত-আচার্য্য নাচে আর সম্প্রদায়ে ॥ ২২৭ ॥

এক সম্প্রদায়ে—এক সমূহ মেং; **নাচে**—নাচনে লগে; **নিত্যানন্দ-রায়ে**—নিত্যানন্দ প্রভু; **অদ্বৈত-আচার্য্য**—অদ্বৈত আচার্য প্রভু; **নাচে**—নাচে; **আর**—দূসরে; **সম্প্রদায়ে**—সমূহ মেং।

অনুবাদ

এক টোলী মেং নিত্যানন্দ প্রভু নাচনে লগে ঔর দূসরী টোলী মেং অদ্বৈত আচার্য নাচনে লগে।

আর সম্প্রদায়ে নাচে পণ্ডিত-বক্রেশ্বর ।
শ্রীবাস নাচে আর সম্প্রদায়-ভিতর ॥২২৮॥

আর সম্প্রদায়ে নাচে পণ্ডিত-বক্রেশ্বর ।
শ্রীবাস নাচে আর সম্প্রদায়-ভিতর ॥ ২২৮ ॥

আর সম্প্রদায়ে—দূসরে সমূহ মেং; **নাচে**—নাচে; **পণ্ডিত-বক্রেশ্বর**—বক্রেশ্বর পণ্ডিত; **শ্রীবাস**—শ্রীবাস ঠাকুর; **নাচে**—নাচে; **আর**—দূসরে; **সম্প্রদায়-ভিতর**—সমূহ কে মধ্য মেং।

अनुवाद

अन्य टोली में वक्रेश्वर पण्डित तथा चौथी टोली में श्रीवास ठाकुर नाचने लगे।

मध्ये रहि' महाप्रभु करेन दरशन ।
ताहाँ एक ऐश्वर्य ताँर हइल प्रकटन ॥२२९॥

मध्ये रहि' महाप्रभु करेन दरशन ।
ताहाँ एक ऐश्वर्य्य ताँर हइल प्रकटन ॥ २२९ ॥

मध्ये रहि'—मध्य में रहकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करेन दरशन**—देख रहे थे; **ताहाँ**—वहाँ; **एक**—एक; **ऐश्वर्य्य**—चमत्कार; **ताँर**—उनका; **हइल**—हो गया; **प्रकटन**—प्रकट।

अनुवाद

जब यह नृत्य चल रहा था, तब श्री चैतन्य महाप्रभु उन्हें देख रहे थे और तब उन्होंने एक चमत्कार प्रदर्शित किया।

चारि-दिके नृत्य-गीत करे यत जन ।
सबे देखे,—प्रभु करे आमारे दरशन ॥२३०॥

चारि-दिके नृत्य-गीत करे यत जन ।
सबे देखे,—प्रभु करे आमारे दरशन ॥ २३० ॥

चारि-दिके—चारों ओर; **नृत्य-गीत**—नाचकर और गाकर; **करे**—किया; **यत जन**—सब लोग; **सबे देखे**—प्रत्येक ने देखा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करे**—किया; **आमारे दरशन**—मुझे देख रहे हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु नाचने वालों के बीच में खड़े थे और सारी दिशाओं के नाचने वालों ने अनुभव किया कि श्री चैतन्य महाप्रभु उनकी ही ओर देख रहे हैं।

चारि जनेर नृत्य देखिते प्रभुर अभिलाष ।
सेइ अभिलाषे करे ऐश्वर्य प्रकाश ॥२३१॥

चारि जनेर नृत्य देखिते प्रभुर अभिलाष ।
सेइ अभिलाषे करे ऐश्वर्य्य प्रकाश ॥ २३१ ॥

चारि जनेर—चार व्यक्तियों का; **नृत्य**—नृत्य; **देखिते**—देखने के लिए; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **अभिलाष**—इच्छा; **सेइ अभिलाषे**—उसके लिए; **करे**—किया; **ऐश्वर्य्य प्रकाश**—चमत्कार का प्रदर्शन।

अनुवाद

चारों महापुरुषों का नाच देखने की अभिलाषा से श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह चमत्कार दिखाया, मानो वे हर एक को देख रहे हों।

दर्शने आवेश ताँर देखि' मात्र जाने ।
केमने चौदिके देखे,—इहा नाहि जाने ॥ २३२ ॥
दर्शने आवेश ताँर देखि' मात्र जाने ।
केमने चौदिके देखे,—इहा नाहि जाने ॥ २३२ ॥

दर्शने—दर्शन करते हुए; **आवेश**—भावपूर्ण प्रेम; **ताँर**—उनका; **देखि'**—देखकर; **मात्र जाने**—मात्र जानते थे; **केमने**—कैसे; **चौ-दिके**—चारों ओर; **देखे**—उन्होंने देखा; **इहा नाहि जाने**—कोई नहीं जानता।

अनुवाद

जिस किसी ने श्री चैतन्य महाप्रभु को देखा, वह समझ सका कि वे चमत्कार कर रहे हैं, किन्तु वे यह नहीं जान सके कि वे चारों दिशाओं में किस प्रकार देख सकते हैं।

पुलिन-भोजने येन कृष्ण मध्य-स्थाने ।
चौदिकेर सखा कहे,—आमारे नेहाने ॥ २३३ ॥
पुलिन-भोजने येन कृष्ण मध्य-स्थाने ।
चौदिकेर सखा कहे,—आमारे नेहाने ॥ २३३ ॥

पुलिन-भोजने—यमुना के तट पर भोजन करते समय; **येन**—जैसे; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **मध्य-स्थाने**—मध्य में बैठकर; **चौ-दिकेर**—चारों ओर से; **सखा**—बालगोपाल सखा; **कहे**—कहा; **आमारे नेहाने**—मुझे देखकर।

अनुवाद

जब कृष्ण अपनी वृन्दावन-लीलाओं में यमुना नदी के तट पर अपने मित्रों के बीच में बैठकर भोजन किया करते थे, तब हर ग्वालबाल यही अनुभव करता था कि कृष्ण उसकी ओर देख रहे हैं। इसी तरह जब चैतन्य महाप्रभु नाच देख रहे थे, तब हर व्यक्ति ने चैतन्य महाप्रभु को अपनी ओर देखते पाया।

नृत्य करिते येई आइसे सन्निधाने ।
महाप्रभु करे ताँरे दृढ़ आलिङ्गने ॥२३४॥

नृत्य करिते येइ आइसे सन्निधाने ।
महाप्रभु करे ताँरे दृढ़ आलिङ्गने ॥ २३४॥

नृत्य करिते—नृत्य करते हुए; **येइ**—जो कोई; **आइसे**—आया; **सन्निधाने**—निकट; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—किया; **ताँरे**—उसको; **दृढ़**—दृढ़; **आलिङ्गने**—आलिंगन।

अनुवाद

जब कोई नाचता हुआ उनके निकट आता, तो श्री चैतन्य महाप्रभु उसका कसकर आलिंगन करते।

महा-नृत्य, महा-प्रेम, महा-सङ्कीर्तन ।
देखि' प्रेमावेशे भासे नीलाचल-जन ॥२३५॥

महा-नृत्य, महा-प्रेम, महा-सङ्कीर्तन ।
देखि' प्रेमावेशे भासे नीलाचल-जन ॥ २३५॥

महा-नृत्य—महा नृत्य; **महा-प्रेम**—महान् प्रेम; **महा-सङ्कीर्तन**—महा संकीर्तन; **देखि'**—देखकर; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **भासे**—तैरने लगे; **नीलाचल-जन**—जगन्नाथ पुरी के सभी निवासी।

अनुवाद

महानृत्य, महाप्रेम तथा महासंकीर्तन देखकर जगन्नाथ पुरी के सारे लोग प्रेम के सागर में तैरने लगे।

গজপতি রাজা শুনি' কীর্তন-মহত্ত্ব ।
অট্টালিকা চড়ি' দেখে স্বগণ-সহিত ॥২৩৬॥

গজপতি রাজা শুনি' কীর্তন-মহত্ত্ব ।
অট্টালিকা চড়ি' দেখে স্বগণ-সহিত ॥ ২৩৬ ॥

গজপতি রাজা—উড়ীসা का राजा; **শুনি'**—सुनकर; **কীর্তন-মহত্ত্ব**—संकीर्तन की महानता को; **অট্টালিকা চড়ি'**—महल की चोटी पर चढ़कर; **দেখে**—देखा; **স্বগণ-সহিত**—अपने निजी साथियों सहित।

অনুবাদ

संकीर्तन की महानता को सुनकर राजा प्रतापरुद्र अपने महल के ऊपर चढ़ गये और उन्होंने अपने निजी संगियों सहित संकीर्तन होते देखा।

কীর্তন দেখিয়া রাজার হৈল চমত্কার ।
প্রভুকে মিলিতে উত্কণ্ঠা বাড়িল অপার ॥২৩৭॥

কীর্তন দেখিয়া রাজার হৈল চমত্কার ।
প্রভুকে মিলিতে উত্কণ্ঠা বাড়িল অপার ॥ ২৩৭ ॥

কীর্তন দেখিয়া—कीर्तन देखकर; **রাজার**—राजा को; **হৈল**—हो गया; **চমত্কার**—आश्चर्य; **প্রভুকে**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **মিলিতে**—मिलने की; **উত্কণ্ঠা**—उत्कण्ठा; **বাড়িল**—बढ़ गई; **অপার**—असीम।

অনুবাদ

राजा महाप्रभु का कीर्तन देखकर अत्यधिक आश्चर्यचकित थे और महाप्रभु से मिलने की उनकी उत्कण्ठा अत्यधिक बढ़ गई।

কীর্তন-সমাপ্ত্যে প্রভু দেখি' পুষ্পাঞ্জলি ।
সর্ব বৈষ্ণব লঞা প্রভু আইলা বাসা চলি' ॥২৩৮॥

কীর্তন-সমাপ্ত্যে প্রভু দেখি' পুষ্পাঞ্জলি ।
সর্ব বৈষ্ণব লঞা প্রভু আইলা বাসা চলি' ॥ ২৩৮ ॥

কীর্তন-সমাপ্ত্যে—कीर्तन की समाप्ति पर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **দেখি'**—दर्शन करने के बाद; **পুষ্পাঞ্জলি**—भगवान् जगन्नाथ के अर्चाविग्रह पर पुष्पों की भेंट; **সর্ব বৈষ্ণব**—

सभी भक्तगण; **लञा**—लेकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **आइला**—लौट गये; **वासा**—अपने निवासस्थान पर; **चलि'**—जाकर।

अनुवाद

जब संकीर्तन समाप्त हो गया, तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने भगवान् जगन्नाथ के अर्चाविग्रह पर पुष्प अर्पित होते देखा। फिर वे तथा सारे वैष्णव अपने निवासस्थान लौट गये।

पड़िछा आनिया दिल प्रसाद विस्तर ।
सबारे बाँटिया ताहा दिलेन ईश्वर ॥२३७॥

पड़िछा आनिया दिल प्रसाद विस्तर ।
सबारे बाँटिया ताहा दिलेन ईश्वर ॥ २३९ ॥

पड़िछा—मन्दिर के अध्यक्ष ने; **आनिया**—लाकर; **दिल**—दिया; **प्रसाद**—प्रसाद; **विस्तर**—प्रचुर मात्रा में; **सबारे**—सबको; **बाँटिया**—बाँटकर; **ताहा**—वह; **दिलेन**—दिया; **ईश्वर**—महाप्रभु।

अनुवाद

तत्पश्चात् मन्दिर की देख-रेख करने वाला अध्यक्ष काफी मात्रा में प्रसाद ले आया, जिसे श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने हाथों से सारे भक्तों को बाँटा।

सबारे विदाय दिल करिते शयन ।
एइ-मत लीला करे शचीर नन्दन ॥२४०॥

सबारे विदाय दिल करिते शयन ।
एइ-मत लीला करे शचीर नन्दन ॥ २४० ॥

सबारे—सबको; **विदाय**—विदा; **दिल**—दी; **करिते शयन**—विश्राम करने; **एइ-मत**—इस प्रकार; **लीला**—लीला; **करे**—की; **शचीर नन्दन**—माता शची के पुत्र ने।

अनुवाद

अन्त में सारे लोग सोने के लिए चले गये। इस तरह शचीमाता के पुत्र श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी लीलाएँ कीं।

যাবতাছিলা সবে মহাপ্রভু-সঙ্গে ।
প্রতি-দিন এই-মত করে কীর্তন-রঙ্গে ॥২৪১॥

য়াবতাছিলা সবে মহাপ্রভু-সঙ্গে ।
প্রতি-দিন এই-মত করে কীর্তন-রঙ্গে ॥ ২৪১ ॥

য়াবত্—जब तक; **आछिला**—रहे; **सबे**—सारे भक्त; **महाप्रभु-सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **प्रति-दिन**—प्रतिदिन; **एइ-मत**—इस प्रकार; **करे**—किया; **कीर्तन-रङ्गे**—आनन्दपूर्वक कीर्तन।

अनुवाद

जब तक भक्तगण जगन्नाथ पुरी में श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ रहे, तब तक प्रतिदिन बड़े ही हर्ष के साथ संकीर्तन लीला चलती रही।

এই ত' কহিলুঁ প্রভুর কীর্তন-বিলাস ।
যেবা ইহা শুনে, হয় চৈতন্যের দাস ॥২৪২॥

এই ত' কহিলুঁ প্রভুর কীর্তন-বিলাস ।
য়েবা ইহা শুনে, হয় চৈতন্যের দাস ॥ ২৪২ ॥

এই ত' কহিলুঁ—इस प्रकार मैंने वर्णन किया है; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **कीर्तन-विलास**—संकीर्तन की लीलाएँ; **य़ेबा**—जो कोई; **इहा**—इसे; **शुने**—सुनेगा; **हय**—हो जायेगा; **चैतन्येर दास**—श्री चैतन्य महाप्रभु का दास।

अनुवाद

इस तरह मैंने महाप्रभु की संकीर्तन लीला का वर्णन किया है और मैं हर एक को यही आशीर्वाद देता हूँ—यह विवरण सुनकर प्रत्येक व्यक्ति निश्चित रूप से श्री चैतन्य महाप्रभु का दास बन जायेगा।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥২৪৩॥

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে য়ার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ২৪৩ ॥

শ্রী-রূপ—श्रील रूप गोस्वामी; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथदास गोस्वामी; **पदे**—

चरणकमलों पर; **ग्रार**—जिनकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* पुस्तक; **कहे**—वर्णन करता है; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए तथा सदैव उनकी कृपा की आकांक्षा करते हुए मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों पर चलते हुए श्रीचैतन्य-चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस तरह श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के ग्यारहवें अध्याय का भक्तिवेदान्त-तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें श्री चैतन्य महाप्रभु की बेड़ा-कीर्तन लीलाओं का वर्णन हुआ है ।